ओ३म्

शिक्षाप्रद श्रेष्ठ कथाएँ

(बच्चों के जीवन का निर्माण करनेवाली सुन्दर कहानियाँ)

आचार्य सत्यानन्द 'नैष्ठिक'

एम०ए० (वेद, संस्कृत)

प्रकाशक :

सत्यधर्म प्रकाशन

गुरुकुल कंवरपुरा, पो०-गोरधनपुरा, तह०-कोटपुतली

जयपुर (राजस्थान)—३०३११५

प्रकाशक :

सत्यधर्म प्रकाशन

गुरुकुल कंवरपुरा, पो०–गोरधनपुरा, तह०–कोटपुतली
जयपुर (राजस्थान)—३०३११५
दूरभाष : ०१४२१–८८१७१

प्राप्ति स्थान :

१. **हरियाणा साहित्य संस्थान**
गुरुकुल झज्जर महाविद्यालय
जिला—रोहतक (हरियाणा)

२. **आर्यसमाज नयाबाँस**
खारी बावली, दिल्ली–६

संस्करण : १९९९

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

मूल्य : २०.०० रुपये

आवरण व शब्द संयोजक :

भगवती लेज़र प्रिंट्स

नई दिल्ली–११० ०६५, दूरभाष : ६४१४३५९

मुद्रक :

राधा प्रेस, कैलाश नगर, दिल्ली–११० ०३१

elibrary.thearyasamaj.org

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
बालकों का गौरव-गान	६
देशप्रेम की शिक्षा	७
विद्यार्थी और विद्याप्राप्ति	८
ब्रह्मचर्य	१०
विद्यार्थी की भावना	१२
परिश्रम ही सफलता की कुंजी है	१४
इज्जत करे इज्जत मिले	१६
धोखेबाजों से सावधान	१८
बड़ों का अनुकरण	१९
सच्चा मित्र-अमूल्य धन	२१
चालाक मित्र से बचें	२३
स्वार्थियों की एकता	२३
आपसी झगड़े में तीसरा पंच	२४
एकता सहयोग और पुरुषार्थ का फल	२५
विद्यार्थी और साहस	२८
सफलता की सीढ़ी	३१
इकलौता पुत्र	३४
अनजान से सावधानी बरतो	३७
हिम्मती का ईश्वर साथी	३८
एहसान का बदला	४१
स्वार्थी पर भरोसा नहीं	४१
शेखचिल्ली की कल्पना	४२

elibrary.thearyasamaj.org

शठ बिना शठता के नहीं मानता ४३
अवसर (समय) को खोनेवाला मूर्ख है ४५
महँगा रोवे एक बार, सस्ता रोवे बार बार ४७
चतुर गृहिणी ४९
मूर्ख गड़रिया और तीन ठग ५१
बुद्धि और भाग्य ५३
बीरबल की खिचड़ी ५७
जैसे को तैसा मिला ५८
फूट से हानि ६०
चतुराई से सफलता ६३
चतुर वैद्य ६६
आँख के अन्धे, गांठ के पूरे ६७
बुद्धिमान् पण्डित और मूर्ख बादशाह ६९
बुद्धिमान् सियार ७१
मुझे ही फाँसी क्यों? ७२
लालच का फल बुरा ७३
विद्यार्थी के कर्त्तव्य ७६
विद्यार्थी का ध्येय ७७
विद्यार्थी के दोष और गुण ८१
धर्म की परिभाषा ८४
सदाचार ८५
सत्पुरुष ८८
जीवन और मौत ९०
याद रखने योग्य १० बातें ९१
पाँच के पाँच शत्रु ९१

library.thearyasamaj.org

प्रकाशकीय

कठिनतम विषय को सरलतम ढंग से समझने-समझाने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि उसे कथा, कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया जाये।

जीवन में सब प्रकार की सफलता पाने के लिए व्यक्ति को बहुत ऊँच-नीच करना पड़ता है। भाँति-भाँति के लोगों से व्यवहार करना होता है। कभी दुःख, कभी सुख, कभी निराशा, कभी अपमान, कभी धोखा छल-कपट भोगना पड़ता है। ऐसी अवस्थाओं में व्यक्ति क्या करे, क्या न करे। इसे इस पुस्तक में कथा कहानियाँ के माध्यम से सबल रूप में समझाया गया है। यदि इन कथाओं के अनूरूप शिक्षा लेकर व्यक्ति संसार में रहता है तो उसे कभी भी कहीं भी कष्ट, धोखा तथा असफलता का सामना नहीं करना पड़ेगा। कथायें छोटी-छोटी हैं, परन्तु सारगर्भित हैं। ये कथाएँ राक्षस को मानव और मानव को देवकोटि तक पहुँचाने की शक्ति रखती हैं। इनके अनुसार जीवन को ढालना बहुत कठिन है। जिसने स्वयं को इन कथाओं के अनुरूप ढाल लिया, वह संसार सागर में कभी मार नहीं खा सकता। आशा है पाठक इन रोचक कथाओं से स्वयं शिक्षा लेंगे और दूसरों को भी इनसे शिक्षा ग्रहण करने की प्रेरणा करेंगे, जिससे मानवमात्र दुःख से दूर होकर सुख वैभव को प्राप्त कर सके।

—सत्यानन्द नैष्ठिक

बालकों का गौरव-गान

बालकों का गौरव-गान निज,
पूज्य पिता के प्यारे हम,
माता के अधिक दुलारे हम,
गुरुओं के एक सहारे हम,
उनके सेवक गुण-गायक हैं;
बालक, हम ऐसे बालक हैं।

विद्यालय की हम बड़ी शान,
घर-घर की हम शोभा महान्,
हो जिन्हें देखना आन-बान,
देखें वे, हम किस लायक हैं;
बालक, हम ऐसे बालक हैं।

यदि राम-कृष्ण समकक्ष नहीं,
प्रह्लाद-तुल्य भी दक्ष नहीं,
ध्रुव-से भी दृढ़ प्रत्यक्ष नहीं,
उन ही के किंतु उपासक हैं;
बालक, हम ऐसे बालक हैं।

दुर्गुण सब दूर करेंगे हम,
सद्गुण भरपूर भरेंगे हम,
हँस-हँस सुख-दुःख सहेंगे हम,

देशप्रेम की शिक्षा

एक जंगल में एक बहुत बड़ा पेड़ था जिस पर खूब फल–फूल लगते थे और छाया भी घनी थी। उस पर बहुत–से पक्षी घोंसला बनाकर रहते थे। उसके मीठे फलों को खाकर जीवन बिताते और उसकी ठण्डी छाया में आनन्द से इस प्रकार रहते हुए उन पक्षियों का उस पेड़ से अत्यधिक लगाव हो गया। पेड़ क्या था, सैकड़ों पक्षियों का बसेरा था, जो पक्षियों का एक गांव–सा लगता था। सुबह–शाम वह पक्षियों के कलरव के मधुर संगीत से गूंज उठता। इस प्रकार पक्षीगण बड़े आनन्द से अपना समय बिता रहे थे।

एक बार जंगल में भयंकर आग लग गयी। आग तूफान की तरह फैलने लगी। जंगल के सभी जानवर, पक्षी, मनुष्य सुरक्षित स्थानों की ओर भागने लगे। शिकारी शिकार का विचार छोड़कर वापिस लौट

गए। आग की लपटें तेजी से फैलकर सभी पेड़ों को अपनी लपेट में ले रही थी। एक शिकारी ने देखा कि एक विशालकाय पेड़ को आग की लपटें पकड़ने लगी हैं और उस पर बैठे पक्षी उड़ नहीं रहे हैं, अपितु ज्यों-के-त्यों स्थिरभाव से बैठे हैं। शिकारी ने उन्हें चेताते हुए कहा—

आग लगी इस वृक्ष को जलन लगे है पात।
उड़ जाओ रे पक्षियो, जब पंख तुम्हारे साथ॥

यह सुनकर पक्षी उड़े नहीं अपितु उन्होंने बड़े दृढ़भाव से शिकारी को यह उत्तर दिया—

फल खाए इस वृक्ष के गन्दे कीन्हें पात।
धर्म हमारा अब यही जलें इसी के साथ॥

पक्षियों का यह उत्तर सुनकर शिकारी निरुत्तर हो गया। थोड़ी ही देर में अपने पेड़रूपी देश के साथ सभी पक्षी बलिदान हो गए।

शिक्षा—पक्षियों के इस संवाद में कवि ने देशवासियों को देशप्रेम की शिक्षा दी है। देश के ऊपर आपत्ति आने पर हमें देश छोड़ कर भागना नहीं चाहिए। अपितु उसकी रक्षा के लिए जी-जान की बाजी लगा देनी चाहिए। जिस मातृभूमि की गोद में हम पले हैं, उसके उपकारों को भूलना नहीं चाहिए। ऐसे ही बलिदानियों के कारण हमारा देश आजाद हो सका है। भगौड़ों से देश गुलाम बन जाता है।

विद्यार्थी और विद्याप्राप्ति

प्राय: लोग कहते हैं कि लोहे के चने चबाना तो सरल है, किन्तु विद्याध्ययन कठिन है।

यह सत्य है। विद्या प्राप्ति के लिये विद्यार्थी को कठिन तपस्या करनी पड़ती है। महाभारत में लिखा है—

सुखार्थी यस्त्यजेद्विद्यां विद्यार्थी वा त्यजेत्सुखम्,
सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।

अहा, कैसे सुन्दर वचन है। जो सुख चाहते हैं, वे विद्या को प्राप्त नहीं कर सकते। और जो विद्याध्ययन चाहते हैं, उन्हें सब प्रकार के सुखों का त्याग करना आवश्यक हो जाता है। यदि कोई यह चाहे

कि विद्याध्ययन के समय वह सब प्रकार के सुख प्राप्त कर ले, और साथ ही विद्या भी पढ़ ले, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। विद्या और सुख का तो वायु और मच्छर के समान स्वाभाविक वैर है।

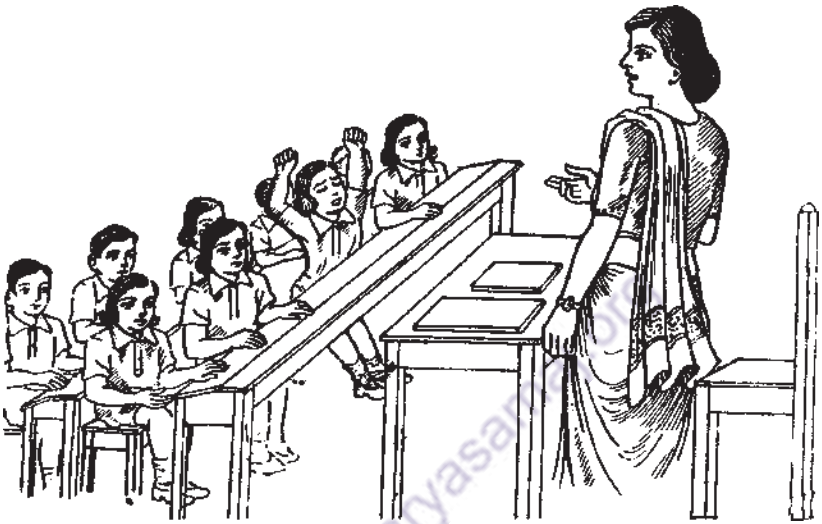

एक वार मच्छर न्यायालय में जाकर निवेदन करने लगे कि वायु हमें बहुत कष्ट देता है। जज ने कहा कि मैं वायु को बुलाकर पूछता हूँ जैसे ही वायु आया, मच्छर इधर–उधर उड़ गये। वे वायु के समाने ठहर नहीं सके। विद्या और सुख का भी ऐसा ही सम्बन्ध है।

विद्या प्राप्ति के लिये विद्यार्थी अनेक प्रकार के कष्ट उठाते हैं। पेट भर भोजन भी नहीं करते, जीभर कर सो नहीं पाते। यदि विद्यार्थी खूब पेट भर कर खायेगा तो उसे नींद सतायेगी। और वह पढ़ नहीं सकेगा। इसलिये जो विद्यार्थी विद्या प्राप्त करना चाहता है, वह सदा ही थोड़ा खाता है, जिससे उनकी जीवनशक्ति नष्ट न होने पाए और वह विद्या प्राप्त कर सके।

पढ़नेवाला विद्यार्थी देर तक सोता भी नहीं। वह सोने में भी समय का थोड़ा ही भाग लगाता है। शेष विद्याभ्यास में लगाता है।

अनेक प्रकार के खिलौने, खेल और मनोरंजनों से विद्यार्थी दूर ही रहता है, वह इन सब सुखों को छोड़ देता है।

सदा याद रखो यदि कोई विद्यार्थी विद्याध्ययन के समय सुख के लिये प्रयत्न करता है, तो वह विद्या नहीं प्राप्त कर सकता, वह मूर्ख

ही रह जायेगा और जीवन भर दु:ख ही उठाता रहेगा।

यदि विद्यार्थी विद्याध्ययन के समय अनेक प्रकार के कष्टों को उठाकर भी विद्या प्राप्त करेगा तो वह जीवनपर्यन्त सुख ही पायेगा।

शिक्षा—इसलिये विद्यार्थियों को चाहिये कि वे एकाग्रचित्त होकर पढ़ें, जो भी गुण वे जिससे भी प्राप्त कर सकें, उन्हें उनसे ही प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये। विद्यार्थियों का सदा यही लक्ष्य होना चाहिये कि हम विद्वान् बन जायें। यह विचारकर ही विद्यार्थी अपना जीवन सफल कर सकता है, इससे ही उसका, उसके परिवार का और उसके देश का यश बढ़ेगा।

ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य व्रत का पालन सब मनुष्यों के लिये आवश्यक है, छात्रों को तो विशेष रूप से इसका पालन करना चाहिये।

प्राचीनकाल में ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्याध्ययन होता था। पढ़ने-पढ़ाने की व्यवस्था आजकल के समान भोग-विलास के वातावरण में नहीं होती थी। बाल्यकाल में (पाँचवें, छठे या आठवें वर्ष में) पिता अपने बच्चों को गुरु के पास शिक्षा ग्रहण करने के लिये भेजते थे।

अथर्ववेद में आया है—

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।
तं रात्री स्त्रिस्त्रः उदरे बिभर्ति, तं जातं द्रष्टुमभि संयन्ति देवाः॥

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि—

जब छात्र पढ़ने के उद्देश्य से आचार्य के समीप आ जाता है, तब वह अन्तेवासी कहलाता है। आचार्य भी उसका उपनयन करके, उसे दीक्षा देकर गुरुकुल में ही रखता है।

ब्रह्मचारी भी गुरुकुल में रहता हुआ ज्ञानार्जन में तत्पर रहता है। जैसे माता के गर्भ में स्थित प्राणी के शरीर के अवयव समय पर पुष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार गुरुकुल में रहते हुए ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये, छात्र के अज्ञानान्धकार को हटाकर आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक विद्याओं में प्रवीणता तथा आत्मा का विकास हो जाता है।

इस प्रकार गुरु से दीक्षा पाकर ब्रह्मचर्य के तप से तपा हुआ ब्रह्मचारी जब कार्यक्षेत्र में आता है, तब वह विषय वासनाओं में नहीं

फँस सकता, जैसे आजकल विषय वासनाओं में फँसे हुये भ्रष्टाचारी लोगों का हाल दीखता है। ब्रह्मचर्य के विना विद्याध्ययन केवल हास्यास्पद ही होता है। विद्याध्ययन के लिये स्मरणशक्ति आवश्यक है। और ब्रह्मचर्य के नाश हो जाने पर स्मरणशक्ति कहाँ रहेगी? यदि स्मरणशक्ति न रहेगी तो विद्याध्ययन कैसा?

योग शास्त्र में कहा है—

'ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।'

ब्रह्मचर्य के पालन से महती शक्ति संचित हो जाती है। ब्रह्मचर्य के तेज से भीष्मपितामह ने महाभारत के युद्ध में अद्भुत कौशल दिखाया था। इसी के प्रताप से हनुमान् ने समुद्र को लाँघा था, परशुराम ने इक्कीस वार धरती क्षत्रियों से शून्य की थी, और वर्तमान युग में ब्रह्मचर्य के बल से ही महर्षि दयानन्द ने वैदिक धर्म का प्रचार करके अन्धकार से घिरे हुए देश को प्रकाशित किया।

विद्याध्ययन के समय ब्रह्मचारियों को सदा ये दोष छोड़ देने चाहियें—

आलस्य, मद, मोह, गप्पें, चंचलता अभिमान और संग्रह करना विद्यार्थियों के ये सात दोष सदा माने गये हैं। सुखार्थी को विद्या कहाँ? विद्यार्थी को सुख कहाँ? या तो सुखार्थी विद्या को छोड़ दे, या विद्यार्थी सुख को छोड़ दे।

ब्रह्मचर्य का पालन करने से ही सब आश्रम सुखी हो सकते हैं। ब्रह्मचर्य ही सब आश्रमों का मूल है। यदि ब्रह्मचर्य नहीं होगा तो सब नष्ट हुए के समान हैं। यदि मूल ही नहीं तो शाखाएँ कहाँ से होंगी, यदि मूल मजबूत है तो शाखा और पुष्प आदि अधिक मात्रा में होंगे।

यह बड़े दुःख की बात है कि आजकल ब्रह्मचर्य का नाश करने वाले बहुत से साधन व्यवहार में आ रहे हैं।

उनमें ऊपर से मनोहर दिखनेवाले शृंगार रस से भरपूर सिनेमा कच्ची आयु में छात्रों को देखने को मिलते हैं तथा अन्य भी चित्त को लुभाने वाले ब्रह्मचर्य के घातक अनेक पदार्थ भोजन सामग्री में मिलते हैं। इन्हीं कारणों से छात्रों की उन्नति नहीं हो पाती। जिसका ब्रह्मचर्य नष्ट हो जाता है, उनके मुख मलिन, गाल पिचके हुए तथा रोगाक्रान्त होते हैं। ब्रह्मचर्य के नाश से छात्र विद्याध्ययन से विरक्त तथा उद्विग्न हो जाते हैं।

शिक्षा—इसलिए जो छात्र अपना कल्याण चाहते हैं, उन्हें ब्रह्मचर्य

का नाश करने वाले विघ्नों से अपने को सदा बचाना चाहिये।

विद्यार्थी की भावना

जिसकी जैसी भावना होती है, उसकी सिद्धि भी वैसी ही होती है। आजकल संसार के जिन देशों ने उन्नति की है, उन सबके इतिहास को देखने से ज्ञात होता है कि वह उन्नति उस देश के विद्यार्थियों ने ही की है। अब से ६० वर्ष पूर्व की बात है कि जापान देश बहुत अनवत देश माना जाता था, वहाँ न तो कोई कौशल था और न विद्या। उस समय देश की ऐसी दुर्दशा देखकर वहाँ के विद्यार्थियों ने संकल्प किया कि हम अपने जीवनकाल में ही जापान की रूपरेखा बदल डालेंगे। इस शुभ संकल्प को लेकर केवल ५० ही विद्यार्थी अपने देश से निकले। वे सब देशों में अनेक कष्ट सहकर अपने संकल्प पर दृढ़ हो गये, और उन-उन देशों के कला-कौशल का ज्ञान प्राप्त करके जापान लौटे। फिर उन्होंने ५० वर्ष के अन्दर ही सारी दुनिया की अपेक्षा अपना देश अधिक उन्नति पर पहुँचा दिया।

एक वार एक भारतीय साधु पुरुष जहाज द्वारा विदेशों की यात्रा करता हुआ जापान पहुँचा। वहाँ उसकी खाद्य सामग्री समाप्त हो गई, उसके पास कुछ जापानी छात्र आये और पूछने लगे,—श्रीमान्, आपको यहाँ कोई कष्ट तो नहीं है! उसने कहा—मेरे पास खाद्य-सामग्री कुछ भी नहीं है, जहाज में बनाया खाना मैं नहीं खाता। अब भूख मुझे सता रही है, इतना सुनते ही वहाँ के छात्रों ने सैकड़ों फल लाकर खाने के लिये उसे दिये, और अनेक वार आग्रह करने पर भी उसका दाम न लिया और कहा कि आप यहाँ से जाकर किसी से न कहें कि जापानी जहाज में यात्रा करते हुये आपको कोई कष्ट हुआ। विद्यार्थियो! आप विचार करें कि अन्य देश के छात्र स्वदेश के प्रति कैसी उच्च भावना रखते हैं। ऐसे ही छात्रों से देश और समाज का हित होता है।

कोई जापान का छात्र इंगलैंड में पढ़ता था। उस देश में गृहस्थ दूसरे

देश के लोगों को अतिथि रूप से रखते हैं और उनकी पूरी सेवा करते हैं। यह जापानी छात्र भी ऐसे ही परिवार में रहा करता था, वह जब अपने किवाड़ बन्द करता था, तब वह किसी वस्तु को नमस्कार किया करता था। घर वालों ने अनेक वार देखा कि यह किसी को नमस्कार करता है, एकदिन किसी को न देखकर उससे पूछा कि आप किसको नमस्कार करते हैं ? उसने कहा—कि यह मेरे देश की ध्वजा है। इस ध्वजा को नमस्कार इसलिये करता हूँ कि मुझ से कोई कार्य ऐसा न हो, जिससे मेरे देश की निन्दा हो। जिन देशों के विद्यार्थियों की ऐसी उच्च-भावना होती है, वे देश उन्नति के उच्च-शिखर पर क्यों न चढ़ें!

यही कारण है कि अन्य देश नित्य ही नये आविष्कार करते हैं। आजकल अन्य देशों में ऐसा मनुष्य नहीं मिलता जो स्वदेश के गीत न जानता हो, और भारत को स्वतन्त्र हुए ५३ वर्ष बीत गए, किन्तु यहाँ के विद्यार्थियों में ऐसी भावना लेशमात्र भी नहीं है। बड़े शोक की बात है कि हमारे छात्र-मण्डल की जबानों पर सिनेमाओं के गाने ही रहते हैं। भारतीय छात्रों को यह भी जानना चाहिये कि जिस पद पर आजकल हमारे प्रमुख नेता हैं, भविष्य में उस पद पर आज के छात्र ही होंगे। आजकल देश की जो-जो कुरीतियाँ हैं, उन सबका निवारण करना भी छात्रों का ही परम कर्त्तव्य है। युवक ही देश के भावी कर्णधार हैं।

इस समय हमारे देश में सत्यपूर्वक व्यवहार की बड़ी आवश्यकता है। उसके विना कोई वस्तु शुद्ध नहीं मिलती, और उससे भारतीय जनता की बड़ी हानि हो रही है। देखिये, आजकल दूध, घी, तेल, शक्कर, आटा, दवाइयाँ आदि सब वस्तुएँ बिलकुल खराब मिलती हैं। जब अन्य देश के विद्वान् भारत की समस्याओं पर विचार करते हैं तो सब यही कहते हैं कि यदि स्वतन्त्र भारत भी अन्य देशों की समानता करना चाहता है तो भारत से अविद्या और असत्य व्यवहार को एकदम दूर करना होगा।

भारतीय विद्यार्थियों की दशा तो इस समय अत्यन्त शोचनीय हैं। वे केवल पोथे रटकर ही विना योग्यता के अपने को विद्वान् समझकर अपने में कोई कमी नहीं मानते हैं। जानते हुए भी हठ के कारण नहीं मानते।

इसीलिये उनकी उन्नति तीनों कालों में भी नहीं हो सकती।

शिक्षा—जब तक छात्र गुणग्राही न बनें, ब्रह्मचर्यपालन न करें

और उपर्युक्त बातों पर विचार न करें, और उनकी दृढ़ प्रतिज्ञा न हो, तब तक हमारा विश्वास है कि उन्नति किसी प्रकार भी नहीं होगी।

परिश्रम ही सफलता की कुंजी है

एक सेठजी की अपनी दुकान थी। बड़ी मेहनत से सेठजी ने अपने कारोबार को बढ़ाया। अच्छी–खासी कमाई भी होती थी। सेठजी

का इकलौता पुत्र था। लेकिन वह महाआलसी, कामचोर, और निखट्टू भी था। सेठजी के लाख समझाने पर भी वह काम न करता था। सेठजी को अपने कारोबार को देख चिन्ता लगी रहती कि इसको यह कैसे सम्भाल पाएगा। आखिरकार सेठजी के मन में एक सूझ आई।

सेठजी ने अपने लड़के को कहा, "बेटे आज अपनी मेहनत का कुछ कमाकर लाओ तभी भोजन मिलेगा, अन्यथा नहीं।" सेठजी ने लड़के को सुधारने का अच्छा तरीका ढूंढा था। लड़का सेठजी की बात सुन कर परेशान हो गया और सोचने लगा कि अब क्या किया जाए? वह सीधे अपनी माताजी के पास गया और गिड़गिड़ाने लगा कि मुझे एक रुपया चाहिए। माताजी ने ममतावश उसे एक रुपया दे दिया। शाम को जब सेठजी ने आज की कमाई मांगी तो लड़के ने एक रुपया उसके हाथ पर रख दिया। पुराने जमाने में एक रुपए की भी बहुत कीमत होती थी। लेकिन सेठजी की नजर लड़के के कार्य

पर थी कि वह क्या करता है। वह सब जान गए। सेठजी ने आदेश दिया, "जाओ इसे पास वाले कूँए में डाल आओ।" लड़का दौड़कर गया और रुपया कूँए में फेंक दिया। लड़के ने सोचा कि बला टल गई।

सेठजी ने दूसरे दिन फिर लड़के को बुलाया और कहा, "आज फिर अपनी मेहनत का कुछ कमाकर लाओ, तभी आपको भोजन मिलेगा।" लड़के ने सोचा आज फिर वही मुसीबत! उसका स्वभाव था कामचोर, आलसी, कार्य वह करना नहीं चाहता था। आज वह बड़ी बहन के सामने जाकर एक रुपये के लिए रोने-धोने लगा। बहन को भाई पर दया आई और एक रुपया उसे दे दिया। लड़के की परेशानी दूर हो गयी। शाम को सेठजी ने उसकी कमाई मांगी। उसने आज फिर उसे एक रुपया थमा दिया। सेठजी बुद्धिमान् थे, वह जानते थे कि यह रुपया कहाँ से लाया है। क्योंकि कल मां से रुपया लाए जाने पर सेठजी ने उसकी माँ को मायके भेज दिया था। अब वह बहन से लाया है। सेठजी ने आदेश दिया, "जाओ इसे भी उसी कूँए में डाल आओं। लड़का तेजी से गया और रुपया डाल आया। तत्पश्चात् उसे भोजन मिला। लेकिन सेठजी ने अपनी बेटी को उसकी ससुराल भेज दिया।

तीसरे दिन सेठजी ने फिर लड़के को बुलाया और कहा, आज फिर अपनी मेहनत का कुछ कमा कर लाओ।" लड़का आज बहुत परेशान था। क्योंकि आज उसे रुपया देनेवाली उसकी माँ व बहन घर पर न थी। आज उसकी कौन सुनता। उसके पड़ौसी सभी जानते थे वह निखट्टू है। जब रुपया मिलने की कोई उम्मीद नहीं रही तो वह चला बाजार में काम ढूँढने। बड़ी मुश्किल से एक काम मिला। लालाजी ने दिनभर भी कार्य करने के बाद एक चवन्नी देने को कहा। लड़के ने इसे स्वीकर किया। दिन भर वह बोरियाँ ढोता रहा। उसकी कमर लचक गई। सीधी भी न कर सकता था। थकावट से वह चूर-चूर हो चुका था। चलने की शक्ति भी उसमें अब न रही। कठिन व कठोर मेहनत के बाद वह चवन्नी लेकर घर पहुँचा। सेठजी ने देखा कि लड़के का चेहरा कुछ और ही बता रहा था। उसने आज की मेहनत की कमाई मांगी। लड़के ने हाथ पर एक चवन्नी रख दी। सेठजी काफी समझदार थे। तुरन्त बोले, "जाओ इसे भी कूँए में डाल

दो।" यह सुनते ही लड़के की आखें क्रोध से लाल हो गई और बोले, "मेरी दिन भर कमर लचकी रही, चलने की भी शक्ति न थी, कितनी कठिन परिश्रम करने के बाद मैं यह चवन्नी लाया हूँ। आप कह रहे हैं कि इसे कूँए में डाल दो।"

सेठजी ने कहा, "कल तो एक रुपया कूँए में डाला था, आज तो केवल एक चवन्नी है।"

लड़का बोला, "पिताजी, यह चवन्नी एक रुपए से कहीं ज्यादा कीमती है क्योंकि मैने यह जान लिया कि बिना मेहनत की कमाई के एक रुपए के फैंकने में मुझे कोई कष्ट न हुआ जबकि चवन्नी के डालने में कष्ट अनुभव कर रहा हूँ।"

सेठजी ने लड़के की कमर थपथपाई। उसे अपने गले से लगा लिया और अपनी दूकान का कारोबार उसे सौंप दिया और कहा, "आज तुमने परिश्रम के फल को जान लिया जो मीठा होता है। परिश्रम ही सफलता की कुंजी है। अब तुम यह कार्य कर सकोगे। बस, यही शिक्षा मैं तुम्हें देना चाहता था।

शिक्षा—मनुष्य को सफलता दिलाने वाला उपाय पुरुषार्थ है। जो मनुष्य पुरुषार्थ नहीं करता, वह पिछड़ जाता है। निठल्ले व्यक्ति का जीवन व्यर्थ होता है।

इज्जत करे इज्जत मिले

एक गांव में दो रईस रहा करते थे। उनमें से एक तो बड़े मालदार–यहाँ तक कि दस–बीस गाँव और करोड़ों के सुभीतेवाले थे और दूसरे साहब के पास किसी गांव में सिर्फ कुछ हिस्सा था। बड़े मालदार साहब की सदैव यह चेष्टा रहती थी कि लोग पहिले हमसे दुआ–बन्दगी, सलाम करें। इसलिए आप गाल फुलाए बैठे रहते थे। कभी अपने आप किसी दूसरे से हाथ जोड़ प्रणाम नहीं किया करते थे और न बैठने–उठने में ही 'आइए', 'पधारिए' कहते थे; बल्कि जहाँ बैठे होते थे वहीं कुर्सी या आराम–कुर्सी पर बैठे रहते थे। आस–पास तिपाइयाँ पड़ी रहती थीं, उन पर आने वाले की तबीयत चाहे तो बैठ जाये और तबीयत चाहे चला जाये। इतना ही नहीं; वरन् दो–चार आदमियों के बैठे रहने पर भी घर से मिठाई मंगवाई या कोई और वस्तु आई, तो और किसी से पूछना–गाछना नहीं। आप ही एका–एकी खाने लगते थे; यही

दशा आप की पान–पत्ते और इलायची में रहती थी। पास के बैठने वाले मुंह ताका करते थे और आप पान, इलायची मुंह में भरे बड़े शौक से बातचीत किया करते। वही दशा इनकी अपनी रियासत से बाहर जाने पर भी साथ के आदमियों से तथा अन्यों से भी रहा करती थी।

दूसरे साहब जो इनके सामने कुछ भी नहीं थे, और केवल एक गांव के कुछ हिस्सेदार ही थे, उनकी यह दशा थी कि सबसे प्रथम अभिवादन करते। अपनी शक्ति भर कभी दूसरे को यह मौका न देते थे कि वह प्रथम अभिवादन करे। यों धोखे से चाहे कोई प्रथम भले ही कर ले। दूसरे को देखते ही उठ पड़ते थे और अपने से उच्च आसन दिया करते थे। पर फिर भी लोग जो जैसा होता था वैसा ही बैठा करते थे। इसके अतिरिक्त कभी किसी वस्तु की एकाएकी मांगने की चेष्टा नहीं करते थे, किन्तु यह औरों को खिला–पिला देते थे और आप वैसे ही रह जाते थे। दूसरे के दु:ख पर जहाँ वह किसी के दरवाजे नहीं जानते थे, वहीं से बिना बुलाए ही दु:खी के दरवाजे प्रत्येक दु:खी–सुखी के दु:ख–सुख में शामिल हुआ करते थे। परिणाम इसका यह निकला कि उन बड़े मालदार की माँ मर गई, और उनके यहाँ एक आदमी भी न पहुँचा, विशेषकर उनकी रियाया भी न गई। केवल नौकर और आप थे और इस एक ग्राम के हिस्सेवाली की स्त्री के मरने के समय पाँच सौ आदमी साथ थे केवल एक काम यही नहीं, बल्कि उस एक ग्राम के हिस्सेवाले के यहाँ यदि कुछ भी काम होता था, तो सैकड़ों आदमी जमा हो जाते थे और इनके यहाँ कोई झांकने भी न जाते थे। उनकी लोग सर्वथा सर्व प्रकार से इज्जत किया करते थे और इनको देखकर उठते भी न थे। निदान इन्होंने अपनी यह बेइज्जती देख सैकड़ों पर झूठे मुकदमे, तहसील–वसूली में सख्ती आदि हर प्रकार क प्रपञ्च रचे, परन्तु लोगों ने इनकी इज्जत न की।

शिक्षा–अगर तुम अपनी इज्जत कराना चाहते हो, तो पहले दूसरों की इज्जत करना शुरू करो, क्योंकि दुनिया आइना के समान है। यथा, आइने के सामने जैसी शकल ले जाओ, वैसे ही उसमें से आपकी आकृति नजर आएगी। इसी तरह दुनिया के साथ जैसे बर्ताव आप करेंगे वैसे ही आपके साथ और लोग करेंगे।

धोखेबाजों से सावधान

एक तालाब के किनारे शेर रहता था। उसके पास एक सोने का कड़ा था। शेर महाधूर्त था। वह उस कड़े का लोभ दिखाकर आने-जाने वाले मुसाफिरों को अपना शिकार बनाता था।

एक दिन एक सेठजी तालाब के किनार से होते हुए जा रहे थे। शिकार को देखकर शेर पानी में जा बैठा। जैसे ही सेठजी शेर के पास पहुँचे, शेर ने अपना शिकार फसाने वाला मन्त्र पढ़ा, "ऐ मुसाफिर रुको! मेरे पास एक सोने का कड़ा है, आकर ले जाओ।" ये शब्द सेठजी के कानों में पड़े और रुक गए। शेर ने फिर यही पुकारा। सेठजी ने सोचा ऐसा अवसर तो सौभाग्य से मिलता है लेकिन शेर को देख डर गए। सेठजी सोचते रहे कि क्या किया जाए कि जान भी बच जाए और सोने का कड़ा भी हाथ आ जाए। सेठ स्वभाव के लालची थे। साथ ही यह भी सोच रहे थे कि शेर मांसाहारी होता है, इसके पास जाना, तो जान-बूझ कर प्राण गँवाना है। दूसरी ओर शास्त्र कहते हैं कि भूल कर भी नदी, शस्त्रधारी, मूर्खव्यक्ति, नाखून वालों का विश्वास नहीं करना चाहिए। सेठजी ने शेर की परीक्षा लेनी चाही, पूछा-"दिखाओ तुम्हारा सोने का कड़ा कहाँ है? शेर ने तुरन्त हाथ

पानी में से निकाल कर कड़ा सेठजी को दिखा दिया। सेठजी ने कहा, तुम तो हम लोगों को खाने वाले हो इसलिए मैं तुम पर विश्वास नहीं कर सकता। शेर ने अपनी धूर्तता को जारी रखा और कहा, ऐ मुसाफिर! मुझसे न जाने कितनी निर्दोष गौवें, मनुष्यों आदि की हत्या हुई है। मेरी अज्ञानता के कारण बहुत पाप हुए हैं, जिससे मेरा पूरा परिवार नष्ट हो गया। अब मैं अपने पापों का प्रायश्चित्त कर रहा हूँ। मुझे एक महात्मा ने धार्मिक उपदेश दिया कि आपका प्रायश्चित्त तभी होगा जब आप दान-पुण्य करें। प्रतिदिन एक सोने का कड़ा दान देवें, इसीलिए मैं नित्य राहगीर को एक कड़ा दान में देता हूँ।

सेठजी शेर के धर्म वचन को सुन कर लालच में आ गए और जा पहुँचे शेर के पास और बोले 'लाओ दे दो सोने का कड़ा'। शेर ने एक और अन्तिम दाव खेला कि आप पहले तालाब में स्नान कर लेवें तभी मैं कड़ा दूँगा। सेठजी जैसे ही वस्त्र निकाल कर तालाब में पहुँचे, तो शेर ने सेठजी को तुरन्त दबोच लिया और एक ही झटके में उसकी हत्या कर अपनी भूख को शान्त किया।

शिक्षा—मनुष्य को कभी भी लालच में आकर अविश्वसनीय का विश्वास नहीं करना चाहिए। दुष्टों का स्वभाव कभी नहीं बदलता, अतः उनसे दूर रहने में ही भला है।

बड़ों का अनुकरण

एक धनी परिवार में बहू आई तो सास ने उसे पूरा मकान दिखाया। अन्त में वे दोनों दहलीज में पहुँचे। वहाँ एक पुरानी खाट पर मैली चादर बिछी थी और उस पर एक बुढ़िया अत्यन्त गन्दे कपड़े पहने बैठी हुई थी। बहू ने पूछा—"माताजी ये कौन है।"

सेठानी ने बताया—यह मेरी सास और तेरी ददिया सास है। परन्तु है बड़ी दुष्ट। सदैव गन्दी रहती है। इसीलिए इसे सबसे अलग यहाँ रखा है। मिट्टी के बर्तनों में खाना दिया जाता है। कोई इससे बात नहीं करता। यह अकेली पड़ी रहती है।

सब कुछ सुनने के बाद बहू ने कहा—अच्छा माताजी अब कल से दादी माँ का भोजन मैं लाया करुँगी।

सास सहमत हो गई। बहू मिट्टी के बर्तनों में खाना खिलाने के बाद उन्हें धोकर रख देती थी। पहले फेंक दिए जाते थे। इस प्रकार रोज के बर्तन इकट्ठे होते गए। बरामदे में ढेर लग गया। एक दिन बहू की सास उधर से निकली तो बहू से पूछा कि यह बर्तनों का ढेर यहाँ किसने लगाया है। मैं तो बर्तन फिकवा दिया करती थी।

बहू ने उत्तर दिया—माँजी; यह मैंने किया है।

सास—क्यों?

बहू—क्योंकि जब इनकी आवश्यकता होगी तो काम में ले लेंगे।

सास—अरे बहू! ये भला क्या काम आएँगे?

बहू—दादी माँ के बाद जब आप बूढ़ी होंगी तो ये ही बर्तन उपयोग में लिए जाएँगे। मुझे तो अपने बड़ों (अर्थात् आप) का अनुकरण करना ही पड़ेगा।

सास चौंक कर बोली—तो क्या तुम मुझे भी इन्हीं खपड़ों में खिलाया करोगी।

बहू—इसमें चौंकने की क्या बात है मांजी! जैसी इस घर की परम्परा है, उसे तो निभाना ही होगा।

सास का दिमाग चकरा गया। रात को उसने स्वप्न देखा कि वह बूढ़ी हो गई है और उसी गन्दी पुरानी चारपाई पर पड़ी मिट्टी के बर्तनों में खा रही है। शीघ्र ही उसकी आँख खुल गई। फिर सारी रात नींद नहीं आई।

प्रातःकाल होते ही वह सीधे अपनी बूढ़ी सास के पास गई और उसके पैरों में सिर रखकर रोने व क्षमा याचना करने लगी—मैंने आपके साथ बड़ा अन्याय किया। अब तक जो हुआ, सो हुआ, आगे से नहीं होगा। मुझे क्षमा कर दो।

अब दीपावली का पर्व आया। धनतेरस के दिन सेठजी ने अपने मुनीम को घर भेजा कि जाकर बहूजी से पूछे कि इस बार धनतेरस पर क्या लिया जाए। बहू ने मुनीमजी से कहा कि सोने के बर्तनों का एक सेट बनवा दें। सैट आ गया। सास ने देखा तो पूछा—बहू इतना महँगा सैट क्यों मंगवाया? क्या कहीं विवाह में देना है?

बहू ने कहा—'नहीं माँजी! घर के लिए मंगवाया है। इसे प्रयोग में लाएँगे।'

सास—'लेकिन बेटा, इतने महँगे सैट की क्या जरूरत थी?'

बहू–जरूरत थी माँजी, तभी तो मँगाया। अब देखिए न मेरी सास अपनी सास को चाँदी के बर्तनों में खिलाती है तो मैं अपनी सास को सोने के थाल में खिलाऊँगी।

यह उत्तर सुनकर सास ने बहू को गले से लगा लिया और कहा–बेटा! तूने मुझे ही नहीं सुधारा अपितु इस घर को भी स्वर्ग बना दिया। सच में तू धन्य है।

शिक्षा–हम जैसा व्यवहार करते हैं, वैसा ही प्रभाव हमारी सन्तान पर पड़ता है। यदि हम अपने से बड़ों का आदर नहीं करेंगे तो हमारी सन्तान हमारा भी आदर नहीं करेगी। मर्यादाओं पर ही कुटुम्ब, समाज और राष्ट्र टिकते हैं।

सच्चा मित्र–अमूल्य धन

दो समृद्ध किसान घनिष्ठ मित्र थे। दोनों में से एक, एक दिन अपने दोस्त के घर पहुँचा तो मित्र की पत्नी ने सूचना दी कि उनके दोस्त तो किसी काम से शहर गए हुए हैं। दोस्त की पत्नी ने अपने पति के मित्र की अच्छी आवभगत की, जलपान व भोजन आदि कराया। जिस समय उसके पति के दोस्त घर पहुँचे, उस समय वह मक्खन से घी बनाने में लगी हुई थी। पति के दोस्त के चले जाने पर उस औरत का ध्यान अपने गले के हार पर गया। उसने उसे खूब ढूँढा, परन्तु मिला नहीं। गले का हार सोने का होने से कीमती था।

शाम को पति महोदय घर पहुँचे तो पत्नी ने हार गुम होने की शिकायत की। पति ने पूछा–"कब खो गया।" उसने बताया उस समय आपके दोस्त आए हुए थे। मैं भी वहीं बैठी घी बना रही थी। पत्नी ने पतिदेव से आग्रह किया कि वह अपने दोस्त से हार के बारे में पूछ आए। पति महोदय ने इन्कार कर दिया और कहा, "मेरा दोस्त बहुत अच्छा, ईमानदार व पैसेवाला है। वह तुम्हारे हार का क्या करेगा?"

पत्नी के अधिक जोर देने पर वह दोस्त के घर पहुँच गया। उसने अपने दोस्त से पूछा, "मित्र तुम्हें मेरी पत्नी के गले के हार के विषय में कुछ मालूम है?" मित्र ने तुरन्त कह दिया मुझे कुछ मालूम नहीं।

दोस्त ने फिर कहा कि, "तुम मेरी गैर हाजिरी में मेरे घर गए थे।

उस समय मेरी पत्नी का सोने का हार गुम हो गया। उस समय दूसरा कोई नहीं आया था। यदि भूल से हार आ गया हो तो बतला दो।" उसका मित्र पहले तो थोड़ी देर चुप रहा फिर बोला, "हाँ, याद आया वह हार तो मैं ही लाया था। मैंने सोचा कि इतना हलका हार मेरे दोस्त की पत्नी के गले में अच्छा नहीं लगता इसलिए उसे भारी करवाने के लिए सुनार को दे दिया है। उसे दो दिन बाद ले जाना।

दो दिन से पहले ही वह हार अपने दोस्त के घर ले कर पहुँचा। दोस्त की पत्नी ने नया चमकीला, सुन्दर भारी हार देखा तो दोनों खुश हुए।

कुछ महीने बाद कोई किसान उसके घर घी लेने पहुँच गया। औरत ने जब किसान को घी देने के लिए उसके पात्र में डाला तो देखा कि जो घी का बर्तन औरत के हाथ में था उसमें नीचे सोने का हार पड़ा हुआ था। उसकी आखें फटी की फटी रह गई। किसान को घी देकर चलता किया। फिर यह घटना उसने अपने पति को बताई और कहा–"हमसे बड़ी भारी भूल हो गई। जब आपका दोस्त यहाँ आया था, मैं घी बना रही थी तो मेरा गले का हार मेरे ही घी के बर्तन में गिर गया। जो आज मिल गया। पति देव को भी आश्चर्य हुआ। अब पति-पत्नी दोनों सोने के हारों को लेकर अपने दोस्त के पास चले गए। उन्होंने अपने मित्र का हार वापिस लौटाते हुए उनसे पूछा, "जब आपने हार उठाया ही नहीं था तो आपने यह अपने सिर कैसे लगा लिया।"

मित्र ने बताया, "यदि मैं हार लेने में इन्कार कर देता तो भी मैं चोर समझा जाता जिससे हमारी दोस्ती टूट जाती। इसलिए मैंने नया हार बनवा कर वह चोरी का शक तुम्हारे मन से निकाला। जिसे खुशी-खुशी आपने स्वीकार भी किया। इसलिए मैंने हार से कीमती दोस्ती को माना। इतना सुन कर पति-पत्नी की आखों से आँसू निकल पड़े और अपनी भूल के लिए क्षमा माँगी। और कहा आपकी सच्ची मित्रता पर मैं कुर्बान भी हो जाऊँ तो वह भी कम है।

शिक्षा–समझदार व्यक्ति सच्ची मित्रता को छोटी-छोटी बातों से टूटने नहीं देते। इससे यह भी शिक्षा मिलती है कि सच्चे मित्र पर कभी शक नहीं करना चाहिए। ऐसे को बाद में पछताना पड़ता है। सच्चा मित्र एक अमूल्य धन होता है।

चालाक मित्र से बचें

किसी वन में एक ऊँट और गीदड़ साथ-साथ रहते थे। गीदड़ ने ऊँट से कहा, कि आओ मित्र खेती करें। ऊँट ने कहा, बहुत अच्छा। फिर दोनों ने मिलकर ईख की खेती की। जब खेत पक कर तैयार हो गया तब ऊँट से गीदड़ बोला, अच्छा अब बटाई कर लो। ऊँट बोला, तुम ही बाँट दो, जो दे दोगे वह ले-लूँगा। गीदड़ ने कहा कि हम जड़ लिए लेते हैं और तुम ऊपर का भाग ले लो, क्योंकि तुम बड़े हो, बस अगोले ऊँट को देकर गन्ने गीदड़ ने ले लिए। अगले वर्ष फिर खेती की ठहरी और गेहूँ बोए। जब बाँट का वक्त आया। तब गीदड़ बोला लो भाई पहिले हमने नीचे का भाग ले लिया था, इस बार आप को दिए देते हैं। गीदड़ ने ऊँट को भूसा देकर आप गेहूँ ले लिये। ऊँट अपने सीधे स्वभाव से दोनों बार घाटे में रहा। गीदड़ ने चाल से दोनों बार नफा उठाया।

शिक्षा—चालाक आदमी से दोस्ती करने पर सदा नुकसान रहता है।

स्वार्थियों की एकता

एक बार दो कुत्ते इधर-उधर से एक वृक्ष के नीचे आ पहुँचे, गर्मी से घबराए हुए थे। वृक्ष की शीतल छाया पाकर बैठ गए और आपस में कहने लगे कि भाई अब तो हमारी जाति में एकता का प्रस्ताव पास हो गया है इसलिए हम दोनों को एक दूसरे से प्रेम भरी बातें करनी चाहिएँ और कभी एक दूसरे पर न हम भूँके न गुर्रावें; अब लड़ाई-भिड़ाई बन्द रहा करेगी। इस बात को थोड़ा ही समय हुआ था कि उसी वृक्ष पर बैठी हुई चील के मुख से मांस का एक टुकड़ा भूमि पर गिर पड़ा। बस, उसे देख दोनों कुत्ते उठाने को झपटे और आपस में लड़ने लगे।

शिक्षा—ठीक यही दशा स्वार्थी मित्रों की है। जब तक स्वार्थ सामने नहीं होता तब तक तो मित्र भाव रहता है और जहाँ स्वार्थ सामने आया कि मित्रता टूट गई। आज देश में राजनीति में ऐसी ही स्वार्थमय मैत्री निभाई जा रही है। इसके कारण साधारण जन भी प्रभावित हो रहे हैं। अतः स्वार्थ त्यागने से ही प्रेम, मेल और एकता रहती है।

आपसी झगड़े में तीसरा पंच

पुत्रक नाम का एक व्यक्ति जंगल में घूम रहा था। घूमते-घूमते उसने एक स्थान पर दो पुरुषों को लड़ते हुए देखा। पुत्रक ने उनसे लड़ने का कारण पूछा तो वे बोले—"हम मायासुर के पुत्र हैं और अपने पिता की सम्पत्ति के लिए लड़ रहे हैं। जो हममें से विजयी होगा, वही उस सम्पत्ति का स्वामी बनेगा।

पुत्रक ने कहा—"तुम एक दूसरे को मरने-मारने पर लगे हो, इससे अच्छा तो तुम उस सम्पत्ति को आधा-आधा बाँट लो। उन्होंने कहा कि तीन वस्तुएँ हैं, हम हैं दो। जिसे मैं चाहता हूँ उसे ही यह भी चाहता है। अब तो न्याय विजयी होने पर ही होगा।

पुत्रक ने पूछा, "ऐसी वे कौन-सी वस्तुएँ हैं जिसके लिए तुम लड़ रहे हो?"

मायासुरों ने संकेत करते हुए कहा, "एक जोड़ा खड़ाऊँ, एक डण्डा और एक कटोरी। यही वह सम्पत्ति है।"

पुत्रक ने कहा, "इतनी साधारण वस्तुओं के लिए एक-दूसरे के प्राण लेना उचित नहीं है।"

तब मायासुरों के पुत्रों ने कहा, "यह साधारण सम्पत्ति नहीं है। इन खड़ाऊँओं को पहनकर मनुष्य आकाश में गमन कर सकता है। इस डण्डे पर जो कुछ लिखा जाएगा वही सत्य हो जाएगा। और जिस वस्तु की इच्छा हो वह इस कटोरे में उपस्थित हो जाएगी। अब आप ही बताइए कि क्या ये साधारण वस्तुएँ हैं?"

पुत्रक ने कहा, "यदि ऐसी बात हो तो मैं सत्य-असत्य का परीक्षण करना चाहता हूँ।" मायासुर के पुत्रों ने इसकी अनुमति दे दी। पुत्रक ने एक-एक करके तीनों वस्तुओं का परीक्षण किया। जो सत्य थी।

पुत्रक ने कहा, "मैं तुम्हें न्याय की विधि बताता हूँ। जो दौड़ में तुम दोनों में से आगे निकलेगा। उसी की विजय होगी और इन वस्तुओं का स्वामी भी वही होगा। इस प्रकार दोनों मायासुरों के पुत्र दौड़ने लगे।

दोनों दौड़ते हुए कुछ ही दूर गए थे कि पुत्रक ने खड़ाऊँ को

पहना और कटोरी व डण्डे को हाथ में लेकर आकाश के रास्ते चल दिया। उनके समीप जाकर उनसे बोले, "तुम दोनों दौड़ते रहो, मैं तो चला। इस प्रकार पुत्रक ने उनको गलती का आभास कराया कि, "यदि तुम दोनों की आपसी फूट न होती तो यह असाधारण वस्तुएँ मुझे कदापि न मिलती।"

इस प्रकार मायासुर के दोनों पुत्र रोने व पछताने लगे और खाली हाथ वापिस घर लौट आए।

शिक्षा—महर्षि दयानन्द के शब्दों में, "जब आपस में भाई-भाई लड़ते हैं तो तीसरा आकर पंच बन बैठता है" राजा लोग आपस में लड़ते रहे। परिणामस्वरूप मुसलमान व अंग्रेज हमारे शासक बन गए। आपसी फूट से नाश निश्चित है। यही दशा हमारे समाज व राष्ट्र और परिवार की है।

एकता, सहयोग और पुरुषार्थ का फल

एक गाँव में एक निर्धन ब्राह्मण रहता था। समय निकलता गया तो उस व्यक्ति का परिवार तो बढ़ता गया, किन्तु उसके साथ ही निर्धनता भी बढ़ती गई। उस गाँव में जब उसकी आजीविका के लिए कुछ नहीं रहा तो उसने सोचा कि अब कुछ और उपाय करना चाहिए। एक दिन ब्राह्मण ने अपने परिवार के लोगों से कहा, "अब हमारा गुजारा वहाँ नहीं होता, चलो कहीं अन्यत्र चलें।"

इस प्रकार परिवार वहाँ से चलने लगा। उसको जाते देख पड़ोसी ने पूछा, "पण्डितजी! किधर की तैयारी हो रही है?"

ब्राह्मण ने अपना मन्तव्य बता दिया।

चलते-चलते एक जंगल में रात पड़ गई। उन दिनों रेलगाड़ी आदि का प्रचलन नहीं हुआ था। पैदल ही यात्रा करनी पड़ती थी। जंगल में एक पेड़ के नीचे परिवार ने डेरा डाला तो ब्राह्मण देवता ने अपने पुत्र-पुत्रियों को कहा, "जाओ, कुछ खाने-पीने का प्रबन्ध करो।"

सब प्रबन्ध करने में लग गए। कोई लकड़ी लाया, कोई पानी लाया, किसी ने चूल्हा बनाया आदि-आदि। जिस वृक्ष के नीचे उन लोगों ने डेरा डाला था। उसकी शाख पर बैठा एक पक्षी यह सब

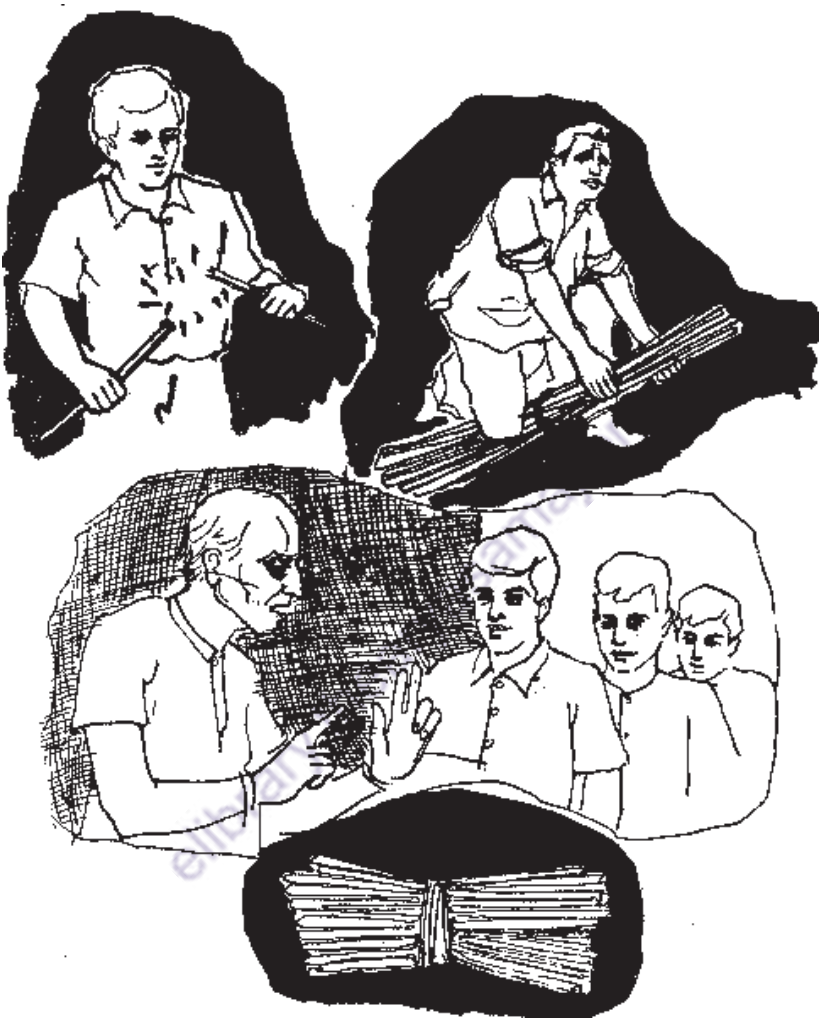

देख रहा था। अन्त में जब उससे नहीं रहा गया तो उसने कहा, "भोले ब्राह्मण! तुमने यह सब तो इकट्ठा कर लिया, किन्तु पकाने के लिए तो कुछ है ही नहीं। तुम लोग खाओगे क्या?"

ब्राह्मण के बड़े लड़के ने कहा—कुछ न मिला तो घास की रोटी पकाकर खा लेंगे। पक्षी समझ गया कि परिवार भूखा है। पक्षी ने सोचा, परिवार धार्मिक और पुरुषार्थी है फिर बोला—"मैं तुम्हें एक स्थान बताता हूँ, वहाँ तुम्हें अपनी मनचाही वस्तु मिल जाएगी।"

ब्राह्मण बोला, "बताओ पक्षी महाराज! कहाँ है वह स्थान?"

पक्षी ने कहा–"दूर नहीं है। वह जो समाने बरगद का पेड़ है, उसके पास जा कर उस स्थान को खोदो। वहाँ तुम्हें बहुत कुछ मिलेगा।"

उत्सुकता तो थी ही। सबने मिलकर उस स्थान को खोदा। देखा तो वहाँ एक बहुत बड़ा कोष है। स्वर्णाभूषण और मुद्राएँ पड़ी थीं। ब्राह्मण परिवार ने वह सब समेटा और अगले दिन वापस गाँव को जा पहुँचा।

पड़ोसी ने उन्हें वापस आते देख पूछा, "पण्डितजी! आप तो कह कर गए थे कि आप परदेश जा रहे हैं, फिर लौट किस प्रकार आए? कुशल तो हैं न?"

पण्डितजी स्वभाव के भोले तो थे ही उन्होंने अपने पड़ोसी को अपने सम्पन्न बनने की कहानी सुना दी। पड़ोसी के मन में लालच आया। उसने बार-बार उस कहानी को सुना। उसका आशय था कि वह भी इसी प्रकार जाकर रात-रात में लखपति बन जाए। पड़ोसी ने वह स्थान भी किसी प्रकार से जान लिया।

अगले दिन दूसरा ब्राह्मण भी लालच के वशीभूत होकर जंगल की ओर चल दिया। उसने भी उसी वृक्ष के नीचे डेरा लगा दिया। वृक्ष पर बैठा वह पक्षी उन्हें देख रहा था। शाम होने लगी। ब्राह्मण ने अपने पुत्र से कहा जाओ भोजन का प्रबन्ध करो। बड़े पुत्र को लकड़ी के लिए भेजा। उसने मना कर दिया। दूसरे को पानी के लिए भेजा। उसने भी मना कर दिया। फिर ब्राह्मण स्वयं गया और भोजन का प्रबन्ध करने लगा। किसी तरह से उसने लकड़ी, पानी, आग का प्रबन्ध किया। उनके पास पकाने को कुछ नहीं था। पक्षी अच्छी तरह देख रहा था। उसने पूछा कि आप लोग क्या खाओगे, आपके पास तो कुछ भी नहीं।

ब्राह्मण के बड़े पुत्र ने कहा कि हम तो तुम्हें मारकर खाएँगे।

पक्षी बोला कि "तुम मुझे नहीं मार सकते। मुझे मारकर खाने का सामर्थ्य तुम लोगों में नहीं है। तुम अपने भोजन के लिए लकड़ी, पानी, आग आदि का प्रबन्ध नहीं कर सके तो तुम मुझे क्या मारोगे?"

ब्राह्मण बोला तो हमें भी वह खजाना बता दे जिसे लेकर हम वापस गाँव लौट जाएँ।

पक्षी बोला, "खजाना पाने की एकता, सहयोग और पुरुषार्थ

केवल पहले ब्राह्मण में थे। आप में नहीं है। उसे उसका फल प्राप्त हो गया। पर तुम लोगों में तो एकता का नाम तक नहीं। तुम अपने-अपने कर्त्तव्य से दूर हो, अधार्मिक हो, लालची हो, आलसी हो।

इस प्रकार खाली हाथ वह ब्राह्मण वापस गाँव लौट आया। इससे उसे लज्जा व ग्लानि हुई और उन्हें अपने कर्त्तव्य का बोध हुआ।

शिक्षा—एकता, सहयोग, पुरुषार्थ और धार्मिकता युक्त व्यक्ति ही जीवन में सफलता पाता है। ऐसे ही व्यक्ति को दूसरों का सहयोग मिलता है। स्वार्थी को नहीं।

विद्यार्थी और साहस

सफलता को प्राप्त करने के लिये बहुत सी बातें आवश्यक हैं। परन्तु यदि ध्यानपूर्वक विचार करो तो कहना पड़ेगा कि सफलता के लिये साहस की अत्यन्त आवश्यकता है। प्रश्न उठता है कि एक डाकू भी साहस करता है, दूसरे को मारकर उसका धन हरकर ले जाता है। दूसरे व्यक्ति को देखिये वह भी साहस करके राह चलती स्त्री के गले में से सोने की माला उतारकर ले भागता है। परन्तु साहस से मेरा आशय उस साहस का है जिससे आचार, विचार, न्यायाचार और धर्मत्व की भावनाओं को ठेस न पहुँचे। दुराचारी जब साहस करता है तो उसमें आचार, विचार और धर्म की भावना नहीं होती।

किसी धार्मिक और नीति के ग्रन्थ का स्वाध्याय करो तो एक बात पढ़ने को मिलती है कि यह जीवन एक संघर्ष है। जब जीवन ही संघर्ष है तो याद रखिये कि जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये साहस की आवश्यकता है। लड़ाई के मैदान में एक सिपाही है। वह बड़ा योद्धा है। अनेक प्रकार अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हो, रणक्षेत्र की तरफ जाता है परन्तु वह साहस से हीन है। आप बताइये वह कैसे सफलता प्राप्त करेगा ? जीवन-संघर्ष में सफल होने के लिये शारीरिक बल भी आवश्यक है। मानसिक शक्ति और ज्ञान की आवश्यकता है परन्तु इन सबके होते हुए भी यदि साहस नहीं तो सफलता कदापि नहीं मिल सकती।

मैंने आपको बताया कि विद्यार्थी में साहस होना चाहिये परन्तु

आचार, विचार, नीति और धर्म की भावना से युक्त साहस होना अच्छा है। जगदीश बड़ा लम्बा-चौड़ा और बलवान् विद्यार्थी है। दो मित्रों के साथ जा रहा है। उन्होंने पान की दुकान से सिगरेट ली और कहा, लो भाई, जरा दम लगाओ। जगदीश में नीतिपूर्वक साहस नहीं है। वह उनको 'नहीं' में उत्तर न देकर सिगरेट पीना आरम्भ कर देता है। दूसरे दिन जगदीश का मित्र महेश भी साथ हो जाता है। महेश बड़ा दुबला पतला है। साथी उसे सींकिया पहलवान के नाम से पुकारते हैं। सिगरेट की दुकान पर पहुँच कर उन्होंने सिगरेट ली, महेश को भी दी और कहा, अरे लो सींकिया पहलवान, आप भी दम लगाओ जरा। महेश सींकिया पहलवान तो अवश्य है, परन्तु धर्माचरण-युक्त साहस का बल उसमें है। वह तुरन्त जगदीश को डाँटता है। दूसरे दोनों साथियों को बुरा-भला कहता है। उसे इस बात का भय नहीं है कि वे सब शरीर में बलवान् हैं, क्रोधित होंगे तो उसकी चटनी बना देंगे अथवा कोई झूठा आरोप लगाकर उसे बदनाम करेंगे। महेश तो चट्टान की तरह खड़ा है और इसे ही मैं कहता हूँ साहस।

विद्यार्थी-जीवन बड़ा कठिन जीवन है। स्वार्थी लोग यह जानते हैं कि विद्यार्थी में अनुभव की कमी है और इसलिए वह प्रत्येक की बात पर विश्वास कर लेता है।

उसकी इस पवित्र भावना से अनुचित लाभ उठाने के लिये छोटे-बड़े सभी तरह के अत्याचारी, गुण्डे और बदमाश लोग विद्यार्थी को अपने जाल में फँसाने को सदा सोचते रहते हैं। अनेक प्रकार के प्रलोभन देते हैं, मीठी-मीठी बातें करके फुसलाते रहते हैं और अनेक प्रकार के यत्न करके विद्यार्थी को पददलित करना चाहते हैं।

यदि विद्यार्थी के पास धर्माचरण-युक्त साहस नहीं है तो वह इन स्वार्थी लोगों की बातों को मानकर अपने जीवन को नष्ट कर बैठता है और यदि उसके पास साहस रूपी बल है तो वह उनके पंजे में नहीं फँस सकता। जब विद्यार्थी साहस से काम लेकर दुष्टजनों के फन्दे से अपने आपको बचा लेता है तो वे दुष्ट लोग उसे कई प्रकार से बदनाम करके दुःख देने का यत्न करते हैं। परन्तु साहसी विद्यार्थी यही सोचता है कि ये दुष्ट मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। इसी प्रकार जब किसी विद्यार्थी को कोई भी बुरा कार्य करने को कोई मजबूर करे तो उसे सोचना चाहिये कि अन्त में इस कार्य को करने में शर्म उठानी ही पड़ेगी। नीतिपूर्वक साहस का बल उसे वैसा नहीं करने देता।

परीक्षा के हाल में बैठे हैं। उसका साथी पीछे से वाधित कर रहा है कि वह उसे कुछ बतावे। परन्तु वह ऐसा नहीं करता है। परीक्षा हाल में से निकल कर उसे भला-बुरा कहा जाता है, परन्तु ये बातें उसे सच्चे मार्ग से डिगा नहीं सकती हैं। साहसी विद्यार्थी अपने ऊपर भरोसा करता है और वह दूसरे की सहायता पर निर्भर नहीं है—भले ही वह फेल हो जाए।

राधेलाल एक विद्यार्थी है। देखने में बड़ा सुडौल है। पढ़ने में बहुत परिश्रमी है, चाहे कुछ सुन लो सब याद है। किसी अत्याचारी लड़के ने उसे तंग किया है और मुख्याध्यापक से शिकायत करना चाहता है। कमरे के बाहर खड़ा है। न जाने मन में क्या विचार आ रहे हैं। मुख्याध्यापक बड़े सज्जन पुरुष हैं। प्रत्येक बालक का बड़ा आदर करते हैं और बालक को ही देश का सर्वोत्तम धन मानते हैं। परन्तु यह सब कुछ जानते हुए भी राधे कमरे के बाहर खड़ा है। भला क्यो ? क्योंकि उसके पास साहस की कमी है और साहस नहीं तो सब बातें निरर्थक हैं।

विद्यार्थी-जीवन में और उसके पश्चात् भी साहस की कमी मनुष्य को पंगु बना देती है। यह कहूँगा, वह कहूँगा और वैसे करूँगा आदि-आदि। परन्तु जब समय आता है और अध्यापक कुछ पूछते हैं तो 'गूँगे का गुड़' की कहावत चरितार्थ होती है। अर्थात् गूँगा गुड़ का स्वाद बता नहीं सकता। बस वही हाल है उसका भी।

शिक्षा—मेरे प्यारे विद्यार्थियो! आपके जीवन में पग-पग पर ऐसी समस्याएँ आती हैं जहाँ धर्मयुक्त साहस की आवश्यकता होती है। यदि आप सिर ऊँचा करके स्वाभिमान-पूर्वक जीवन को बिताना चाहते हैं तो आपको उचित है कि साहस से काम लें और तभी आप प्रत्येक प्रकार के अनाचार-अत्याचार और दुराचार से अपने को सुरक्षित रख सकेंगे।

सफलता की सीढ़ी

'सफल विद्यार्थी' पुस्तक पढ़ने से पहले स्वभावत: ही एक प्रश्न मन में आता है कि सफलता क्या है और वह कैसे मिलती है ? भिन्न-भिन्न अवसरों पर बहुत से लोगों से बातें करने का अवसर मिला। सभी से प्राय: एक बात सुनने को मिली, ''भाई क्या बताऊँ, मैं बहुत कुछ कर

सकता था, परन्तु..... ।'' इन शब्दों का अर्थ है कि उसने अपने जीवन में बड़ी आशाएँ बाँधी थी। परन्तु समय ने साथ न दिया और ऐसे कारण बने कि उसे अपने उद्देश्य में सफलता न मिली। तब भी यह मानना पड़ता है कि प्रत्येक व्यक्ति सफलता चाहता है।

साधारणतः देखें तो प्रत्येक व्यक्ति यह कहेगा कि, ''मैं राजा बन जाऊँ तो बस जीवन सफल हो जायेगा।'' परन्तु गौतम बुद्ध का उदाहरण आपके सामने है। वह राज–पाट, सुन्दर स्त्री, अपने नवजात पुत्र और सब प्रकार के सुख के साधनों का परित्याग करके चले जाते हैं। अन्त

में गौतम ने ज्ञान प्राप्त कर अपने जीवन को सफल बनाया। आप इस पर विचार करें तो पता चलेगा कि राजा बनना कोई सफलता नहीं है। राजा बनकर रहना, महलों के आराम भोगना, गौतम को आकर्षित न कर सका। वह उनकी इच्छा के विरुद्ध था। अतः राजा बनने में कोई

सफलता नहीं मानी जा सकती।

इंगलैंड में मेरी लड़की के पड़ौस में एक सज्जन रहते हैं। एक बार वह भारत में आये और देहली में मुझसे भी मिले। बातचीत में उन्होंने बतलाया कि उनका एक लड़का अमृतसर जिले के एक गाँव में पढ़ता था और सातवीं में दो बार फेल हो गया। उसे वह इंगलैंड ले गये और एक टैक्निकल संस्था में दाखिल करा दिया। सात साल की शिक्षा के बाद वहाँ उसे १४०० रुपये उसी संस्था में मिलते हैं। यदि वह बालक अमृतसर जिले में पढ़ता तो सात साल में शायद दसवीं भी पास न कर पाता क्योंकि जब सातवीं कक्षा में दो वर्ष लगे तो आठवीं-नवीं आदि कक्षाओं में भी इसी प्रकार समय लगता। अमृतसर जिले में वह बालक सफल नहीं हो सकता था। क्योंकि वहाँ का वातावरण और पढ़ाई उसकी रुचि के अनुकूल न थी। जब उसकी रुचि के अनुसार कार्य मिला, उसने भी श्रम किया और वहाँ उसकी इच्छा शक्ति का विकास हुआ और सफलता ने उसके पैर चूमे।

बिहार में रहने वाले मेरे एक मित्र हैं। घर के बड़े जमींदार हैं। घर पर रहकर यदि अपनी जमीन का ठीक प्रबन्ध करते तो हजारों रुपया महीने की आय घर बैठे हो जाती। उनकी पत्नी भी एक जमींदार की इकलौती पुत्री थीं। कितने ही व्यक्ति यह सोचेंगे कि इतनी बड़ी जमींदारी हाथ में आये तो जीवन सफल हो जाये। पर ऐसी बात नहीं। उनकी पत्नी इस बात का बहुत जोर लगातीं कि वे गाँव में रहें और सुख से जीवन बितावें। पर उनको तो लिखने और कविता की धुन थी। वह जमीन, जायदाद और अपनी पत्नी तक को छोड़ने को उद्यत हो गये पर गाँव में रहकर वह जमींदारी का प्रबन्ध न कर सकते थे। जिस बात को, जिस जमींदारी को लोग-बाग जीवन की सफलता मानते थे वह तो उनके लिये कुछ भी नहीं थी। वह तो १६ घण्टे और कभी-कभी १८ घण्टे भी बैठे रहते थे। भोजन मिले या न मिले बस चाय की प्याली और कविता की झड़ी। कविता करने में उनकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सारी शक्तियाँ लग जाती थीं। यह उच्चकोटि की कविता लिखते और मस्त रहते। बस यही उनकी सफलता थी।

इसी प्रकार के अन्य उदाहरण भी लिखे जा सकते हैं। परन्तु उनकी कोई आवश्यकता नहीं हैं। इन उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो

गई कि सफलता केवल धन, बड़प्पन तथा यश कीर्ति आदि की प्राप्ति में नहीं हैं। तब आखिर सफलता किसे कहते हैं।

सफलता उस लक्ष्य प्राप्ति के साधनों को कह सकते हैं जिसके लिये मनुष्य अपनी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रवृत्तियों को पूर्णतः लगाकर उसकी प्राप्ति में अपना सब कुछ त्यागने को उद्यत रहे, उसकी प्राप्ति को अपना जीवन तथा अप्राप्ति को अपना मरण समझे।

एक आदमी टैक्निकल कार्य में, दूसरा कविता लिखने में तथा तीसरा कुश्ती करने में सफलता प्राप्त करता है। कौन-सा मनुष्य किस चीज में सफल होता है, यह उसकी अपनी रुचि पर निर्भर करता है।

भारत में शिक्षा का ढाँचा बहुत असन्तोषजनक है। यहाँ पर बालक को अपनी रुचि और प्रकृति के अनुकूल पूर्ण विकास करने का अवसर बहुत कम मिलता है। मेरे एक साथी हैं जिन्होंने बी० एस-सी० पास करके फिर एल०टी० किया और फिर एल०एल०बी० किया और आज कल अजमेर के पास किसी पत्थर की खान में काम करते हैं। न विज्ञान का क्षेत्र उनके सामने पड़ा, तथा एल०एल०टी० करके अध्यापक भी न बन सके और एल०एल०बी० करके वकालत के क्षेत्र को भी न अपना सके। जो भी कार्य उन्होंने आरम्भ किया, वह उनकी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रवृत्तियों के प्रतिकूल था। उसमें वह अपना सर्वस्व लगाने को उद्यत भी हुए, पर सफल न हो सके, जिसमें उन्होंने अपनी सभी शक्तियाँ लगा दीं उसी में उनको सफलता मिली।

अब आपने जान लिया कि सफलता क्या है? अब यह प्रश्न उठता है कि सफलता मिलती कैसे हैं? सफलता प्राप्त करने के दो मार्ग नहीं हैं, केवल एक ही मार्ग है, और वह है—''जी तोड़कर कठोर परिश्रम करना।'' किसी ने ठीक ही कहा है—

''मेहनत करो, मेहनत करो,''
मेहनत जो की, जी तोड़कर,
सब शौक से मुँह मोड़कर,
कर दोगे दम में फैसला,
पर है यह मुश्किल बात क्या?
''मेहनत करो, मेहनत करो''

शिक्षा—आप सभी अपने जीवन को सफल बनाना चाहते हैं, तो पुरुषार्थ करो। आलसी व्यक्ति सारा जीवन पिछड़ा रहता है।

इकलौता पुत्र

मधु प्रत्येक प्रकार से अपने नाम को सार्थक करती है। देखने में इतनी सुन्दर है कि लोग कहते हैं कि विधाता ने मधु को स्वयं सुन्दरता की प्रतिमा बनाया है। मधु के गुणों की सुगन्ध सारे सुन्दर नगर में फैली हुई है। मधु अपने पति प्रीतपालसिंह के साथ सुख से जीवन व्यतीत करती थी। प्रीतपालसिंह पुलिस में थानेदार थे। वे कभी किसी से किसी प्रकार से भी कोई वस्तु लेना अपने धर्म के विरुद्ध समझते थे। अपने वेतन पर निर्वाह करते थे और आवश्यकता पड़ने पर दीन दु:खियों की सहायता भी करते थे। उनके लिये लोग कहा करते थे कि भगवान् को प्रसन्न करने के लिये लोग पुष्प, धूप, दीप चढ़ाते हैं; परन्तु प्रीतपालसिंह को तो कोई पुष्प भी भेंट नहीं कर सकता।

मधु के एक पुत्र-रत्न हुआ और वह अभी दो ही साल का था कि प्रीतपालसिंह की मृत्यु हो गई। प्रीतपालसिंह कोई धन छोड़कर न मरे थे। मधु बड़े संकट में थी। उसके कोई और भी सम्बन्धी नहीं थे, जिनके पास रहकर निर्वाह करती। धन का होना प्रसन्नता का कारण भले ही न हो, पर धन का अभाव दु:ख का कारण अवश्य बन जाता है। मधु के पास धन का अभाव देखकर धनी लोगों ने सोचा कि अब तो वे धन के बल से मधु के साथ निन्दनीय और असहनीय अत्याचार करने में सफल हो सकेंगे! परन्तु मधु, मधु थी। वह साहस और वीरता से अपने दिन बिताने लगी और उसने किसी अत्याचारी को अपने पास न फकटने दिया। उसने आवश्यक सामान तथा बर्तन कपड़े आदि रखकर सब सामान बेचकर अपने पुत्र को पाला और अब वह पाँच वर्ष का हो गया। सिलाई की मशीन उसके पास थी। उसने बच्चों और स्त्रियों के कपड़े सी कर अपना निर्वाह आरम्भ कर दिया और अपने पुत्र को पाठशाला में भरती कर दिया।

एक दिन एक धनिक स्त्री बाजार से कपड़े लेकर सिलवाने के लिये मधु के पास बैठी थी। भूपेन्द्र पाठशाला का समय समाप्त होने पर घर पहुँचा। धनिक की स्त्री बाजार से अपने बच्चों के लिये मिठाई

भी लाई थी। उसने कुछ मिठाई निकाली और भूपेन्द्र को देनी ही चाही। मधु ने बड़े नम्र भाव से उसका धन्यवाद करके कहा कि मैं अपने बच्चे को यह मिठाई खाने को नहीं दे सकती हूँ। जैसा अन्न मनुष्य खाता है वैसा ही उसका मन बन जाता है और वैसी ही उसकी बुद्धि बन जाती है। लोग दीपक जलाते हैं, दीपक काले रंग के अन्धकार को खाता है और काला काजल ही पैदा करता है। आप बुरा न मानें बहिन जी, मुझे पता नहीं है कि आपका धन कैसा है। धन, सुख, शान्ति तथा सफलता का कारण केवल उन लोगों के लिये ही होता है जो कठिन परिश्रम करके उससे अपना जीवन-यापन करते हैं। मैं भूपेन्द्र की बुद्धि को निर्मल रखना चाहती हूँ इसीलिये उसे किसी के घर की कोई वस्तु खाने को नहीं देती हूँ। बेचारी धनवान् स्त्री बड़े अचम्भे से मधु की ओर देखती रह गई।

भूपेन्द्र भी बड़े परिश्रम से पढ़ता था और अब सातवीं कक्षा में पहुँच गया था। वह खेल-कूद और पढ़ाई में सबसे आगे था। प्रत्येक परीक्षा में उसके नम्बर सबसे अधिक आते थे। वह यह अनुभव कर रहा था कि वह निर्धन है और पढ़ाई का खर्च दिन-पर-दिन बढ़ता जाता था। उसने एक दिन अपनी माता मधु से कहा कि वह ऊँची-ऊँची शिक्षा प्राप्त करना चाहता है, पर माता पर बोझ नहीं बनना चाहता था। मधु ने भूपेन्द्र की बात का समर्थन करते हुए कहा, ''बेटा! मैं तुम्हें आशीर्वाद देती हूँ कि तुम सफल मनोरथ हो। संसार में जो वस्तु असम्भव दीखती है, परिश्रम करने से वही सम्भव हो जाती है। तुम्हारे अन्दर अपार शक्ति का भण्डार है। अपने को पहचानो और उस शक्ति से काम लो, फिर तुम अवश्य सफल होगे। तुम्हारी राह में अनेक प्रकार के प्रलोभनरूपी काँटे आएँगे, उनमें मन न फँसाना। ईश्वर-विश्वास, सच्चाई और सच्चरित्रता के साथ अपने ध्येय पूर्ति में लगे रहना; बस, तुम सफल होगे।''

मधु की बात सुन भूपेन्द्र बोला, ''माता जी आपकी असीम कृपा के लिये कैसे धन्यवाद करूँ? मैंने आपका दूध पिया है और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जीवन में किसी कार्य से भी आपके दूध को नहीं लजाऊँगा।''

भूपेन्द्र की बात सुनकर मधु को बड़ा सन्तोष हुआ और उसने कहा कि संसार में किसी भी प्रकार की मेहनत मजदूरी करके कमाना कोई पाप नहीं है। यदि मजदूरी ईमानदारी पर निर्भर करती है

तो उस मजदूरी को करने वाला नीच नहीं हो सकता। वास्तव में नीच वे लोग हैं जो दूसरों की कमाई (धन) से मौज से उड़ाते हैं या बरवाद करते हैं। महावीरसिंह भी तो एक निर्धन विद्यार्थी है, अब कालिज में पढ़ता है। उसने सब-कुछ अपने बल-बूते पर पढ़ा है। उसने कोई काम नहीं छोड़ा। पहले मजदूरी करता था और फिर किताबों की जिल्द बाँधकर कमाने लगा, फिर जूतों पर पालिश करने की धुन लगी, फिर साइकिल ले ली और समाचार-पत्र बेचने लगा। और अब, जब दसवीं में आया तो ट्यूशन करने लगा। दूसरे बच्चे तो अपने पढ़ने को ट्यूशन रखते हैं और फिर भी फेल होते हैं। महावीर तो औरों को पढ़ाता रहा और आज तक कभी फेल नहीं हुआ। अब तो उसने प्रेस में कम्पोजीटर का काम सीख लिया है। बस कालेज से जो समय मिलता है सीधा प्रेस में जाकर काम करता है।

भूपेन्द्र ने अपनी माता की बात गाँठ बाँध ली। अपनी सुविधा के अनुसार मजदूरी करके पढ़ने लगा और इसी प्रकार पढ़कर एक बड़ा इंजीनियर बना और सरकारी नौकरी करने लगा। सरकारी इंजीनियर यदि चरित्र का धनी न हो तो ठेकेदार उसे भ्रष्ट कर देते हैं।

भूपेन्द्र सिंह को कोई भी पथभ्रष्ट न कर सका। उसने मधु के दूध को अपने कार्य और चरित्र से कभी नहीं लजाया।

शिक्षा—यदि लक्ष्य को सामने रखकर परिश्रम किया जाये तो सफलता अवश्य मिलती है।

अनजान से सावधानी बरतो

पुराने जमाने की बात है कि एक बुढ़िया पैदल यात्रा कर रही थी। चलते-चलते वह थक गयी। उठती- बैठती वह अपनी यात्रा पर चलती रही। तभी दूर पीछे से उसे कोई घुड़सवार आता दिखाई दिया। बुढ़िया सोचने लगी, "यदि यह घुड़सवार मेरी गठरी घोड़े पर रख कर ले जाए और अगले पड़ाव पर छोड़ दे तो उसको काफी मदद मिल जाएगी।"

जब वह घुड़सवार उस बुढ़िया के पास आया तो उसी आशा से उसने घुड़सवार से कहा, "भैया! तू मेरी यह गठरी अपने घोड़े पर रख ले और आगे जो पड़ाव आएगा वहाँ रख जाना, मैं वहाँ से ले लूँगी। तेरी बड़ी मेहरबानी होगी। मैं बहुत थक गई हूँ, बोझ अब भारी लगने

लगा है।"

घुड़सवार ने गठरी उठाने के बजाय बुढ़िया की खिल्ली उड़ाते हुए कहा, "वाह री महारानी! तेरी गठरी ले जाऊँ? जा, जा अपनी राह चल।"

यों कहकर घुड़सवार आगे बढ़ गया। लाचार बुढ़िया अपनी गठरी उठाते हुए चलती रही। आगे चलकर घुड़सवार को ध्यान आया कि उसने बुढ़िया की गठरी न लेकर बड़ी भूल की। वह सोचने लगा कि यदि मैं बुढ़िया से गठरी ले लेता और आगे के पड़ाव पर न रख कर सीधा अपनी राह चला जाता तो कौन मुझे रोकने वाला था और कौन पूछने वाला था। हो सकता है बुढ़िया की गठरी में सोना-चांदी हो। यह ध्यान आते ही वह रुक गया।

उधर चलते-चलते बुढ़िया को ध्यान आया और उसे भी अपनी गलती अनुभव हुई। वह सोचने लगी कि वह भी कैसी भोली है जो अनजान व्यक्ति पर विश्वास कर बैठी। यदि वह अगले पड़ाव पर गठरी न देकर सीधा चलता बनता तो मैं उसका क्या बिगाड़ सकती थी।

इन्हीं विचारों में बुढ़िया जा रही थी कि आगे उसे वही घुड़सवार बैठा दिखाई दिया। बुढ़िया ने सोचा, बैठा होगा विश्राम करने के लिए। उसने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया और वह अपनी राह चलती बनी।

बुढ़िया को यों आगे निकलती देख घुड़सवार को चिन्ता हुई। उसने तो सोचा था कि इस बार भी बुढ़िया फिर गिड़गिड़ाएगी। जब बुढ़िया ने उस ओर ध्यान ही नहीं दिया तो वह घुड़सवार बोला, "अम्मा! ला तेरी गठरी मैं ले चलता हूँ। पहले मैं समझ ही नहीं पाया कि इसमें मेरा क्या हर्ज है। मुझे अपने कन्धे पर तो ले नहीं जानी है?

बुढ़िया बोली, "नहीं बेटा! वह बात तो अब बीत गई जो तेरे मन में कह गया वह चुपके से मेरे कान में भी कह गया है। तू अपनी राह चल। मैं तो धीरे-धीरे जिस किसी तरह पहुँच ही जाऊँगी।"

घुड़सवार अपना-सा मुख लेकर आगे बढ़ गया।

शिक्षा—अनजान आदमी पर कभी भरोसा नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से कभी भी धोखा हो सकता है।

हिम्मती का ईश्वर साथी

एक बार एक सियार ने किसी को कहते हुए यह शब्द सुन लिया कि 'हिम्मते मर्दां मददे खुदा'; इसने इसे अपना आदर्श बना लिया और हर बात में यह अपनी स्त्री सियारिन से कह दिया करता था कि हिम्मते मर्दां मददे खुदा। अर्थात् हिम्मती पुरुष की मदद ईश्वर करता है।

कुछ दिनों के बाद सियारिन ने एक सिंह की गुफा में जहाँ सिंह ने अपने आराम के लिए फूस-फास बिछा रखा था, बच्चे उत्पन्न किए। वहाँ शेर कई दिनों से नहीं आया था।

एक दिन सियार और सियारिन अपने बच्चों सहित बैठे ही थे कि इतने में सिंह दहाड़ता हुआ आया। सियार ने शेर को आते देख अपनी स्त्री सियारिन से कहा—"अपने बच्चों को शीघ्र उठाकर चलो, जल्दी भाग चलें।" सियारिन ने कहा—"आज वह 'हिम्मते मर्दां मददे खुदा' कहाँ चला गया?"

सियार को बड़ी शर्म मालूम हुई। उसको अचानक एक युक्ति सूझी और पैर ऊपर को उठाकर खड़ा हो गया। शेर इसे देख हैरान था कि यह अजीब जानवर कौन है! यद्यपि मैं रात-दिन जंगल में ही रहता हूँ और जंगल का राजा हूँ। पर ऐसा जन्तु मैंने आज तक नहीं देखा कि

इतने में सियार अपनी स्त्री सियारिन से बोला—"अरी बनकूकरी!" सियारिन ने उत्तर दिया—"कहो, सब जग के बैरी।"

यह शब्द सुनकर सिंह के होश-हवाश उड़ गए और वह सोचने लगा कि सब जग में तो मैं भी हूँ। यह कोई बड़ा ही बलवान् जन्तु है। ऐसा समझ सिंह भाग खड़ा हुआ। सियार के सम्मुख से सिंह को भागते देख जंगल भर के जीवों को आश्चर्य हुआ कि आज गजब हो गया कि सियारों के सम्मुख से सिंह भागने लगे।

एक बन्दर जो यह चरित्र देख रहा था, वनराज शेर के सम्मुख हाथ जोड़ बोला—"महाराज, यह सियार है जिसके सामने से आप भागे जाते हैं।" शेर ने कहा—"तू बिल्कुल झूठ कह रहा है, क्या सियार हमने देखे नहीं? सियार ऐसा नहीं होता।" बन्दर ने कहा—"महाराज, वह ऊपर को पैर उठाए खड़ा था। आप चलिए, वह अभी भाग जाएगा।"

बन्दर के बहुत समझाने पर शेर ने बन्दर से कहा—"अच्छा तू आगे चले तो चलें।" बन्दर तो यह निश्चय से जानता ही था कि वहाँ सियार है, वह निर्भय आगे चला। सियार ने जाना कि यह बन्दर जान का घातक हुआ, लेकिन अपने उस वाक्य को याद कर कि 'हिम्मते मर्दां मददे खुदा' फिर खड़ा हो गया। जब बन्दर और शेर दोनों कुछ समीप पहुँचे, तब फिर सियार ने कहा—"तेरे बच्चे क्यों रोते हैं।" सियारिन ने कहा—"मेरे बच्चे शेर खाने को माँगते हैं।" वनराज शेर यह सुनकर भाग खड़ा हुआ।

बन्दर यह दशा देख हैरान था कि जब शेर इस सियार के सम्मुख से भागता है, तो हम लोगों का कैसे गुजारा होगा? अतः बन्दर फिर शेर के पीछे पड़ा और हाथ जोड़कर बोला—"महाराज! आप व्यर्थ भाग उठते हो। वह निश्चय सियार है, आगे चलने ही से भाग जाएगा।" सिंह ने कहा—"सियार के बच्चे कहीं सिंह खाने को माँगते हैं?" बन्दर ने कहा—"महाराज, यही तो गीदड़ भभकी है।"

अतः शेर को बन्दर ने बहुत समझाया, तो शेर ने कहा—"अब की बार हम तब चलेंगे, जब मेरी पूँछ से तू अपनी पूँछ बाँध और तू आगे चल। नहीं तो तू जात का बन्दर बड़ा चालाक है, तेरा क्या ठीक; मुझे वहाँ मौत के मुँह में झोंक, भाग खड़ा हो।" बन्दर को कुछ भय तो था ही नहीं, उसने वैसा ही किया और दोनों गुफा की ओर चले। अब सियार ने इन दोनों को इस भाँति आते देखा तो

कहा—"अब के प्राण गए, अब नहीं बच सकते।" परन्तु उसे अपनी कहावत फिर याद आई कि—'हिम्मते मर्दां मददे खुदा।'

अतः वह फिर उसी भाँति खड़ा हो गया और सियारिन से बोला—"अरी बनकूकरी।" सियारिन ने कहा—"कहो सब जग के बैरी!" सियार ने कहा—"तेरे, बच्चे क्यों रोते हैं?" सियारिन ने कहा—"मेरे बच्चे शेर खाने को माँगते हैं। सियार ने कहा—"तो तू गुस्सा क्यों होती है?" सियारिन ने कहा—"इसलिए कि बन्दर को भेजा था कि दो शेर ले आ, सो प्रथम तो वह आया ही बड़ा देर में है, दूसरे दो के बदले एक ही पूँछ में बाँधकर लाया है।" शेर इतना सुनते ही बन्दर की पूँछ तक उखाड़कर भाग खड़ा हुआ। सच है, 'हिम्मते मर्दां मददे खुदा।'

शिक्षा—बहुत-से मनुष्य आपत्ति आने पर कूएँ में गिर पड़ते हैं, जहर खा लेते हैं, कोई आग लगने पर कौने में घुस पड़ते हैं, कोई निकलकर रास्ता भूल प्राण दे देते हैं। कितने ही शेर और भालू का नाम सुन काठ के खिलौने से खड़े रह जाते हैं, जिन्हें आकर वह खा भी जाते हैं। कितने ही घबराए पथिकों के समूह दो-चार डाकुओं से लूट लिए जाते हैं; पर एक धीर पुरुष सिंह के छक्के छुड़ा देता है। किसी ने ठीक कहा है—

आपत्ति के समय पर भी धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए; क्योंकि कदाचित् धैर्य से स्थिति प्राप्त हो जाए; जैसे—समुद्र में जहाज डूबने का समय आ जाने पर भी उद्योग करने से बच जाता है।

एहसान का बदला

एक बार एक नाले के किनारे एक चिड़िया पानी पी रही थी। इतने में एक चींटी पेड़ की टहनी से गिरकर नाले में जा पड़ी।

चिड़िया ने देखा—चींटी पानी में डूब रही है। उसने झट से किनारे पर लगी बेल से एक पत्ता तोड़ा और चींटी के पास फेंक दिया।

चींटी झट से उस पत्ते पर सवार हो गई। एक लहर आई। पत्ता किनारे पर आ लगा, और चींटी बच गई। चींटी ने मन ही मन चिड़िया का धन्यवाद किया और वहीं पेड़ के नीचे रहकर अपना

भोजन खोजने लगी। एक दिन चिड़िया पेड़ की शाखा पर बैठी थी। थोड़ी देर में एक शिकारी आया। उसने चिड़िया पर बन्दूक का निशाना लगाया।

चींटी ने सोचा कि चिड़िया ने मेरा जीवन बचाया था। अब वह बेचारी संकट में फँसी है। मुझे भी उसके उपकार का बदला चुकाना चाहिए। यह सोचकर चींटी ने झट से शिकारी के पाँव पर जोर से डंक मारा।

अचानक डंक लगने से शिकारी का बदन हिल गया, हाथ काँप गए और उसका निशाना चूक गया। चिड़िया बच गयी।

बन्दूक की ठाँय की आवाज सुनकर चिड़िया उड़ गई इस तरह चींटी ने चिड़िया के एहसान का बदला हाथों-हाथ चुका दिया।

शिक्षा—छोटे-छोटे एहसान का बदला चुकाते हैं। छोटों को छोटा समझकर उनकी उपेक्षा न करें। कृतघ्न मनुष्य पापी होता है।

स्वार्थी पर भरोसा नहीं

किसी शिकारी ने एक तीतर पकड़ा। जब शिकारी तीतर को मारने लगा तो उसने कहा—"स्वामी, मुझे न मारिए। इस उपकार के बदले, मैं सौ तीतर पकड़ने में आपकी सहायता करूँगा।"

इस पर शिकारी ने कहा—"अगर ऐसी बात है तब तो मैं तुझे बिल्कुल नहीं छोड़ूँगा, क्योंकि तुम परले दरजे के स्वार्थी और खतरनाक हो। अपनी जान बचाने के लिए तुम अपने सौ भाइयों को मौत के घाट उतारने को तैयार हो! मैं तुम पर भरोसा नहीं कर सकता।"

शिक्षा—स्वार्थी पर भरोसा करना बुद्धिमानी नहीं है। वह कभी भी स्वार्थवश हानि पहुँचा सकता है।

शेखचिल्ली की कल्पना

एक शेखचिल्ली साहब एक स्टेशन पर रहा करते थे। एक दिन एक मियाँजी रेल से एक राब की गगरी लेकर उतरे और शेखचिल्ली से कहा—"अबे इस घड़े को शहर ले चलेगा?" शेखचिल्ली

ने कहा–"हाँ हुजूर।" मियाँ ने कहा–"दो पैसे मिलेंगे।" शेखचिल्ली ने कहा–"दो ही देना।" मियाँ ने शेखचिल्ली के सिर पर घड़ा रखवा कर आगे-आगे स्वयं और पीछे-पीछे शेखचिल्ली चले।

अब शेखचिल्ली की मनसूबेबाजी देखिए। शेखचिल्ली सोचता है–"इस घड़े को शहर में रखवाई मुझे दो पैसे मिलेंगे। उन दो पैसों की एक मुर्गी लूँगा। जब मुर्गी के अण्डे-बच्चे होंगे, तो उन्हें बेचकर बकरी लूँगा। जब बकरी के कच्चे बच्चे होंगे, तो उन्हें बेचकर गौ लँगा। जब गऊ के बछड़े होंगे, तो उन्हें बेच एक भैंस लूँगा। जब भैंस के बच्चे होंगे, तो उन्हें बेचकर ब्याह करूँगा। फिर मेरे भी बाल-बच्चे होंगे, और वे बच्चे मुझसे कहेंगे कि बापू हमको फलाँ चीज ले दो, हम कहेंगे-धुत् बदमाश।" इस शब्द के जोर से कहने से सिर से घड़ा गिर गया और गिरकर फूट गया। यह देख मियाँजी बोले–"अबे तूने यह क्या किया; घड़ा क्यों फोड़ दिया?" शेखचिल्ली ने कहा–"अजी मियाँ, आपको तो घड़े की पड़ी है, यहाँ तो बसा-बसाया घर ही उजड़ गया।"

शिक्षा–व्यर्थ की कल्पनाओं से बचो। कल्पनाएँ मनुष्य को मानसिक रोगी बनाती हैं।

शठ बिना शठता के नहीं मानता

एक बाबाजी के पास कुछ सुवर्ण की अशरफियाँ एक लोहे के सोटे (डण्डे) में बन्द थीं; बाबाजी ने कहीं तीर्थ-यात्रा करने का विचार किया; इस कारण, बाबाजी एक सेठ के पास जाकर बोले–"सेठजी, जरा हमारा यह सोटा जब तक हम तीर्थ-यात्रा करके न लौटें, रखे रहिए।" सेठजी बोले–"महाराज, यहाँ सोटा-ओटा रखने की जगह नहीं। परन्तु जब बाबाजी ने बहुत कुछ कहा, तो सेठजी ने कहा–"अच्छा महाराज, जाओ उस कोने में रख दो। जब आना तब उठा लेना।" साधुजी सोटा रखकर चले गए।

यहाँ सेठानी और सेठ रोज उस सोटे को उठा-उठा देखते रहे और आपस में कहते थे–"सोटा बहुत भारी है, जाने क्या बात है।" सोटे के ऊपर एक फुल्ली जड़ी हुई थी। सेठानी ने कहा–"मालूम होता है कि इस सोटे के भीतर कुछ भरा है, हो न हो, यह फुल्ली उखाड़ कर देखना चाहिए कि इसके भीतर क्या

है?" सेठ ने ऐसा ही किया। जब फुल्ली उखाड़ी, तो उसमें से पीली-पीली अशरफियाँ गिर पड़ीं। सेठ ने अशरफियाँ घर रखकर सोटा फेंक दिया।

कुछ काल के पश्चात् साधुजी लौटे और सेठजी के पास जाकर सोटा माँगा। पहले तो सेठजी ने साधुजी को पहचाना ही नहीं, जब पहचाना, तो बोले—"आपका सोटा तो छछुन्दरी खा गई।" साधुजी चुप रह गए और सेठजी के पास से चले गए।

थोड़े दिन के बाद साधुजी आकर उसी गाँव में पढ़ाने का काम करने लगे। बहुत से गाँव के लड़के साधुजी के पास आने लगे और उस सेठजी का लड़का भी आने लगा, जिन्होंने सोटा छछुन्दरी को खिला दिया था। कुछ दिन बाद साधुजी ने इस सेठ के लड़के से कहा—"देख, आज जब तुझे छुट्टी दें, तो अमुक स्थान से लौट आना। अगर तू न लौटा और घर चला गया तो समझ लेना कि तेरी खाल खींच लूँगा।" सेठ का लड़का बेचारा भय से लौट आया। साधुजी ने उस लड़के को एक कोठरी के अन्दर बन्दकर दिया और उसमें कुछ खाने को रख दिया और लड़के से कहा—"अगर तू बोला, तो समझ लेना कि तू था ही नहीं।"

थोड़ी देर में जब समय अधिक व्यतीत हुआ और लड़का घर न आया, तो सेठजी ने अपने लड़के की खोज की। जब लड़का न मिला, तो सेठ ने साधुजी से पूछा। साधुजी बोले—"भाई सब लड़कों से पूछ कहाँ गया?" जब सेठजी ने लड़कों से पूछा, तो लड़कों ने कहा—"हमारे साथ अमुक स्थान तक गया था, फिर हम नहीं जानते कि कहाँ गया?" सेठजी फिर इधर-उधर घूमकर साधुजी के पास आए और बोले—"साधुजी लड़का नहीं मिलता, न जाने कहाँ गया?" साधुजी ने कहा—"यहाँ से तो हमने लड़के को छुट्टी दे दी थी; परन्तु हाँ, एक लड़के को एक गिद्ध उसकी चोटी पकड़े हुए ऊपर को लिए जा रहा था?"

सेठजी ने पुलिस में रिपोर्ट की। थानेदार ने आकर पूछा—"साधुजी, सेठ का लड़का कहाँ गया?" साधुजी ने कहा—'हमने तो यहाँ से छुट्टी दे दी थी; आप सब लड़कों से पूछ लें। जब थानेदार ने लड़कों से पूछा, तो लड़कों ने साफ कह दिया—"हुजूर हमारे साथ अमुक स्थान तक गया है, हम नहीं जानते।" पुनः साधुजी बोले—"थानेदार साहब, हाँ, एक बात हमने देखी थी कि एक गिद्ध एक लड़के की

चोटी पकड़े ऊपर को लिये जाता था।" थानेदार ने कहा—"कहीं गिद्ध लड़के की चोटी पकड़ के उड़ा ले जा सकता है?" तब तो साधुजी ने कहा—

महाराज! **'शठं प्रति शाठ्यं कुर्यात् सादरं प्रति आदरम्'** इस कहावत के अनुसार जब तक शठ के साथ शठता न की जाए तब तक शठ नहीं मानता। महाराज, हम तीर्थ-यात्रा जाते समय इनके पास एक सोटा रख गए थे, जिसमें बहुत-सी अशरफियाँ थीं। जब हमने आकर इनसे सोटा माँगा, तो सेठजी बोले कि 'लोहे का डण्डा तो छछुन्दरी खा गई' सो हूजूर अगर छछुन्दरी लोहे का डण्डा उगिल दे, तो गिद्ध भी सेठ का लड़का लौटा देगा। यह सुन सेठजी ने सम्पूर्ण अशरफियाँ मय-डण्डे के साधुजी को भेंट की और साधुजी ने सेठ का लड़का कोठरी से निकाल दिया।

शिक्षा—दुष्ट स्वभाव के लोग दण्ड और भय से ही मानते हैं। सज्जनता को वे कायरता समझकर अधिक दुष्टता-धूर्तता करते हैं। ऐसों को दण्ड, भय और कठोरता से सन्मार्ग पर लाना चाहिए।

अवसर (समय) को खोनेवाला मूर्ख है

एक बार एक कुम्हार अपने गधे को लेकर कहीं जा रहा था कि उसे रास्ते में एक चमकदार पत्थर मिल गया। उसमें एक छेद भी था उसने उस छेद में डोरा डाला और पत्थर को गधे के गले में डाल दिया। उसी रास्ते में जाते हुए एक जौहरी ने उस पत्थर को देख लिया और वह समझ गया कि पत्थर नहीं हीरा है। जौहरी यह भी समझ गया कि कुम्हार को यह पता नहीं है कि वह हीरा है, नहीं तो उसे वह गधे के गले में नहीं लटकाता। उसने कुम्हार से कहा, "क्यों भाई! अगर मैं यह पत्थर खरीदना चाहूँ तो कितने में दोगे?"

"आठ आने दे दीजिए।" आठ आने बहुत हैं चार आने ले लो।" कुम्हार समझ गया कि खरीदनेवाले को इसकी जरुरत है। उसने चार आने में देने में आना-कानी की। जौहरी भी चार आने पर अड़ा रहा। अन्त में कुम्हार ने कहा—"अच्छा लालाजी! न तुम्हारी न हमारी। लाओ छः आने दे दो।"

"नहीं भाई, मैं तो चार आने ही दूँगा।" जौहरी ने सोचा कि कुम्हार थोड़ी देर बाद चार आने में दे देगा। कुम्हार जब नहीं माना तो

जौहरी आगे बढ़ गया। उसे यह आशा थी कि कुम्हार उसको आवाज देकर कहेगा, "अच्छा ले जाओ, चार आने में ही ले जाओ।" लेकिन कुम्हार ने उसे वापस नहीं पुकारा।

तभी पीछे से एक और जौहरी आ निकला। उसने जब गधे के गले में पत्थर बंधा देखा तो कुम्हार से पूछा, "क्यों भाई! यह पत्थर बेचोगे?" कुम्हार समझ गया कि यह कोई काम की वस्तु है। उसने कहा, 'ले लो।' कितने पैसे लोगे?" "एक रुपया"।

जौहरी ने अण्टी से रुपया निकाला और कुम्हार के हाथ में पकड़ा दिया। कुम्हार ने रुपया खनखनाया और खग जानकर अपनी अंटी में दबोचा और पत्थर खोलकर जौहरी को दे दिया।

पहला जौहरी यह सब देख रहा था। उसे पश्चात्ताप तो हुआ,

फिर भी सोचा देखें कितने में सौदा हुआ। वह कुम्हार की इन्तजार में बैठा था। कुम्हार जब उसके पास पहुँचा तो वह बोला, "क्यों भई कितने में बेचा वह पत्थर।"

"सेठजी! एक रुपये में।"

जौहरी बोला, "तुम तो मूर्ख हो, वह तो हीरा था हीरा। तुमने पत्थर के मोल बेच दिया।

कुम्हार बोला, सेठ! मूर्ख मैं हूँ कि तुम? मुझे तो मालूम नहीं था कि वह हीरा है, फिर भी मैंने उसे पत्थर के दाम नहीं बेचा। उतने छोटे से पत्थर का मूल्य एक रुपया कौन देता? लेकिन तुम्हें तो मालूम था कि वह हीरा है, फिर भी पत्थर के मोल भी तुमने उसे खरीदना नहीं चाहा?"

जौहरी की गरदन शर्म के मारे झुक गई। एक तो बहूमूल्य हीरा उसके हाथ से निकल गया था, दूसरे कुम्हार ने सिद्ध कर दिया कि वह जौहरी नहीं, मूर्ख है।

शिक्षा—अवसर महत्त्वपूर्ण होता है। अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहिए। एक बार हाथ से निकला अवसर फिर हाथ नहीं आता। अवसर को पहचानो। अवसर निकलने के बाद पछताने के सिवाय कुछ नहीं मिलता।

महँगा रोवे एक बार सस्ता रोवे बार बार

मुफ्त में चीज लेने या असल मूल्य से कम दे कर फायदा उठाने की कामना मनुष्य में होती ही है। जो व्यापारी यह कहते हैं कि दिवाला निकल जाने से या किसी और कारण से हम लागत से भी कम मूल्य पर माल बेचने के लिए विवश हुए हैं, उनका विश्वास सोच समझ कर ही करना चाहिए। क्योंकि 'लूट! लूट!! महालूट!!! के फन्दे में पड़ने से धन के बदले प्रायः बहुत निकम्मा माल मिलता है। कम कीमत पर निकम्मी चीज खरीदने से धन भी जाता है और चीज तो बुरी मिलती ही है। सस्ती चीजें केवल 'बेचने के लिए ही बनाई जाती हैं, यह बात इस कथा से मालूम हो जायगी—

एक मनुष्य बाजार में उस्तरे बेच रहा था। "बारह आने के अठारह उस्तरे!" "बारह आने के अठारह उस्तरे!" इस प्रकार वह

आवाजें देता फिरता था। यह निस्संदेह बहुत सस्ता सौदा मालूम होता था। हर किसी के मन में ऐसी लूट लूटने की लालसा उत्पन्न होती थी। एक देहाती जाट ने उस्तरेवाले की यह आवाज सुनी। जाट को हजामत बनवाए बहुत दिन हो गए थे। उसकी ठोढ़ी पर चप्पा चप्पा बाल उग रहे थे। उसने झट खुशी से बारह आनें दे कर अठारह उस्तरों का एक डिब्बा खरीद लिया, और उस डिब्बे की सुन्दरता और उस्तरों की चमक देखता हुआ मन-ही-मन कहने लगा—"मालूम होता है, यह बदमाश कहीं से ये उस्तरे चुरा लाया है। पर मुझे क्या, मुझे तो अपनी हजामत बनानी है।" घर आते ही वह हजामत बनाने बैठा। कानों और आँखों तक सारा चेहरा उसने पानी से खूब रगड़ डाला। खूब रगड़ चुकने पर वह एक उस्तरा लेकर बड़े कष्ट के साथ दाढ़ी को खुरचने लगा, मानो उलटे खुरपे से घास खोद रहा है! 'यह उस्तरा निकम्मा है, हजामत नहीं बनाता' ऐसा कहकर बड़े दु:ख से उसने पहला उस्तरा अलग रख दिया और दूसरा लिया। इसी तरह सब उस्तरों को एक-एक करके चलाकर देखा। पर सब एक से ही भोथरे निकले। तब उसने ठण्ढ़ी साँस भरकर कहा—"क्या ही अच्छा होता जो मेरे बारह आने मेरी जेब में ही रहते। भला बारह आने में भी कभी अठारह उस्तरे मिलते हैं! और फिर, मुझे उस्तरों की जरूरत ही क्या थी? बड़ी भूल हुई—

मक्खी बैठी शहद पर, पंख गये लपटाय।
हाथ मले और सिर धुने, लालच बुरी बलाय।।"

दाढ़ी को मूँडने और चेहरे की सुन्दरता को बढ़ाने का व्यर्थ यत्न करते हुए उसने सारे मुखमण्डल पर घाव कर लिये—उस्तरे की काट से जगह-जगह गढ़े पड़ गये। जाटजी जन्म-करम में पहली ही बार तो अपने आप अपनी हजामत बनाने बैठे, और सो भी भोथरे उस्तरे से! कई जगह सूजन पड़ गई। कई जगह से लहू की धारा बहने लगी। बेचारा तंग आकर इधर-उधर कूदने और तिलमलाने लगा। वह एक-एक उस्तरे को बार-बार कोसता था। उसकी खाल कड़ी थी और बाल सूअर की तरह मोटे। इसलिए उनका मूँड़ना आसान न था। वे वैसे के वैसे बने रहे। मारे क्रोध के गँवार जाट उस धोखेबाज़ उस्तरेवाले पर दाँत पीसने लगा—"सूअर! तेरे उस्तरे तो नकटे की नाक भी नहीं काटते।"

यों खिसियाता हुआ वह उस्तरेवाले को ढूँढ़ने दौड़ा। जब वह

मिला तो उससे बोला—"मियाँ उस्तरेवाले! लोगों की जान जाय और तेरी हँसी ठहरी। अबे नीच! मैं तेरे भोथरे उस्तरों के साथ दाढ़ी को रगड़-रगड़कर थक गया, पर हजामत न बनी। जो उस्तरे हजामत नहीं बना सकते, उनके बेचने के लिए आवाज़ें देकर तू भारी छल कर रहा है।" उस्तरेवाले ने उत्तर दिया—"मित्र! मैं छल नहीं करता। जो उस्तरे तुमने खरीदे, मैं सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मेरा तो कभी यह ख्याल भी न था कि वे हजामत बनावेंगे; और न मैंने कभी तुम से यह कहा था कि इनसे हजामत बनाई जा सकती है।" यह सुनकर गँवार को बड़ा अचरज हुआ और वह झुँझलाकर बोला—"हैं! तुम्हारा खयाल न था कि वे हजामत बनावेंगे। कुत्ते! तो फिर वे बनाये किस मतलब के लिए गये हैं?" उस्तरेवाले ने मुस्कराकर उत्तर दिया—"वे बनाये गये हैं बेचने के लिए।"

शिक्षा—आज लोग ठगने के दाव में रहते हैं, इसलिए प्रत्येक वस्तु सोच-समझकर देख-परख कर लेनी चाहिए। इसी प्रकार कोई भी विचार तभी स्वीकार करना चाहिए जब वह परीक्षा की कसौटी पर खरा उतरे।

चतुर गृहिणी

एक बहुत पुरानी कहावत है कि आदमियों में नाई, पक्षियों में कौवा और पशुओं में सियार बड़े चतुर होते हैं। जब नाई चतुर होता है तो नाईन क्यों उससे कम होगी?

रामलाल नाई थे और नाई का ही काम करते भी थे। लेकिन वे काम कम और हरामखोरी ज्यादा करते थे। निठल्लेपन की आदत पड़ गयी थी। उस पर भी तुर्रा यह कि उनके बेकार दोस्तों की संख्या काफी लम्बी-चौड़ी थी और उनका आना-जाना भी रामलाल के घर पर लगा ही रहता था। परिणाम यह हुआ कि काम कम और आमदनी भी कम और ऊपर से मेहमान नवाजी अलग। घर पर फाकामस्ती की नौबत रहती थी। नाइन बेचारी परेशान रहती, अपने कर्मों को ठोकती रहती।

चाँदी के रुपये के दर्शन उसके लिए दुर्लभ ही रहे। नाई जो दो-चार आने रोज के कमा कर उसके हाथ पर रख देता तो उससे घर का खर्च कभी पूरा हुआ ही नहीं। लेकिन रामलाल के

जीवन में एक दिन परिवर्तन का आया। सौभाग्य से उस दिन राम लाल की कमाई कुछ अच्छी हो गई। उसने कुछ आने नहीं बल्कि दस रुपये नाईन के हाथ में लाकर थमा दिए।

उस दस रुपये की ऐंठ में नाई मियाँ ने दूसरे दिन दूकान नहीं खोली और न फेरी पर ही गए। नाईन को यह बुरा लगा। उसने नाई को बुरा-भला कहा। लेकिन उसपर कुछ असर नहीं हुआ। नाई अपनी बीवी की डाँट खाकर बैठा ही था कि सामने से घोड़ी पर सवार अपने उस्ताद को आते देखा तो उसकी बाँछें खिल गईं, नाई ने सोचा अब दिन मौज-मस्ती में कट जाएगा। रामलाल का जीवन ऐसा था कि रोज कूंआ खोदते और पानी पीते। थोड़ी ही देर में रामलाल के मुफ्तखोर उस्ताद घर पर पहुँच गए।

रामलाल ने उस्ताद को बिठाया, घोड़ी को खूँटे से बाँधा और दौड़े-दौड़े गए भीतर। बड़े जोश से बोले, "रानी! वह दस रुपये तो लाओ जो कल दिए थे?" नाईन के तन-बदन में आग लग गई। जिन्दगी में पहली बार उसने अपने पति के मुख से 'रानी' शब्द सुना होगा लेकिन उसके दस रुपये की माँग जो थी, उसमें उसकी सारी नम्रता काफूर हो गयी। बोली, "किसलिए लाऊँ?"

"अरे देखती नहीं उस्ताद आए हैं।"

"उस्ताद! काहे के उस्ताद! ऐसा कौन-सा फन तुममें है जिसके तुमने उस्ताद बनाए थे?"

रामलाल को देर होती खल रही थी। उसको आज पता चला था कि उसकी पत्नी टेढी भी हो सकती है। बड़े प्यार से बोले, "अरे तुम क्या जानो। ये पतंगबाजी, बटेरबाजी, कबूतरबाजी, वगैरह-वगैरह सभी फन मैंने इन्हीं से तो सीखे हैं। कौन है इस आलम में जो इन फनों में इनका लोहा न मानता हो? बड़े भाग से मेरे घर आए हैं।"

नाईन पेशोपेश में थी, दे तो भला नहीं, न दे तो भी भला नहीं। आखिर उसको एक तरकीब सुझी। उसने अपने लंहगे की कमर से एक पैसा निकाल कर देते हुए कहा, "अभी तो यह लो। अपने उस्ताद को जरा ताजा हुक्का पिलाओ। तब मैं उन रुपयों को खोद कर निकालती हूँ। मैंने तो उन्हें गहरे गाड़ दिया था। सोचती थी कि कभी आड़े वक्त काम आएँगे। चलो अब तुम्हारे उस्ताद आए हैं तो खोदती हूँ।"

नाई खुश होकर तमाखू लेने बाजार चला गया। वह गया तो नाईन परदे की ओट में हो उस्ताद मियाँ को दुआ–सलाम कर बोली, "उस्तादजी" मैं तो बहुत परेशान हो गई हूँ। कुछ समझ में नहीं आता क्या करुँ? आपके शार्गिद को न जाने क्या हो गया है कि हम लोगों का जीना मुश्किल हो गया है। कुछ आप कर सको तो बड़ी मेहरबानी होगी। औरत की आवाज पर उस्तादजी रीझ गए लेकिन उम्र का तकाजा था इसलिए बोलना पड़ा, "बेटी! खुलासा बात बताओ, क्या बात है। मेरा शागिर्द और उसका जीना मुश्किल? ऐसा नहीं हो सकता।"

"अब आपको क्या बताऊँ...! यह कहकर वह सिसकियाँ भरने लगी!

आखिर उस्तादजी ने नाईन को कसम दिलाई तब जाकर कहीं उसे राज खोलते हुए बताना पड़ा, "यों पहले तो ये हर आनेवाले की अच्छी आवभगत करते हैं और फिर न जाने अचानक क्या होता है कि उसके नाक–कान काटने पर उतारु हो जाते हैं।

उस्तादजी ने सुना तो उसके होश उड़ गए। उनकी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की नीचे। गला सूख गया। मुख से कोई बात बोल ही नहीं सकता। नाईन ने मौका देखा तो अन्दर खिसक गई। उस्तादजी बहुत देर तक तो कुछ सोचते रहे। आखिर में उन्हें एक ही राह सूझी। उन्होंने अपनी घोड़ी खोली और चलते बने। इधर उस्ताद निकले कि उधर रामलालजी आए। उस्ताद को न देख रामलाल हैरान होकर पत्नी से पूछने लगा, "उस्तादजी कहाँ गए?" नाईन बोली, "ये न जाने कैसे उस्ताद हैं?" रामलाल ने कहा–"अरी क्या हुआ भागवान?" नाईन बोली, "हुआ तो कुछ भी नहीं नाशपीटा मुझसे कहने लगा जरा पेटी में से उस्तरा तो निकाल दे। मैंने हाथ के इशारे से मना कर दिया तो अपनी घोड़ी खोलकर चलता बना।"

नाई हैरान। उसने अपनी पत्नी से कहा, "ला जरा पेटी में से उस्तरा तो निकाल दे। एक जरा सी बात के लिऐ तूने उस्ताद को नाराज कर दिया। मैं उन्हें देने जा रहा हूँ।"

बीवी तो चाहती यही थी। उसने झट से उस्तरा निकाल कर दे दिया। नाई उस्तरा लेकर उस्ताद के पीछे दौड़ा। दूर से उस्ताद को आवाज दी और उस्तरा दिखाते हुए बोला, "उस्ताद मैं उस्तरा ले आया

हूँ। रुको तो सही।"

उस्ताद ने जो उस्तरा देखा तो घोड़ी को ऐसी एड़ लगाई कि यह जा, वह जा। तब से रामलाल दोस्तों के नाक-कान काटने वाले मशूहर हो गए और पत्नी को उनके दोस्तों से निजात मिल गई। उनकी जिन्दगी सुख-चैन से कटने लगी।

शिक्षा—मनुष्य को ऐसी समझदारी से व्यवहार करना चाहिए कि 'लाठी भी न टूटे और साँप भी मर जाए।' इसी समझदारी से नाईन ने पति के मुफ्तखोर मित्र से पीछा छुड़ाया। मुफ्तखोरों से दोस्ती करना घाटे का सौदा होता है।

मूर्ख गड़रिया और तीन ठग

एक गड़रिये ने एक गांव में जाकर अपने लिए एक बकरा खरीदा। गड़रिया बकरे को अपने कन्धे पर रखे हुए अपने गाँव को जा रहा था। उसको रास्ते में तीन ठग मिले। तीनों ठगों ने सोचा कि गड़रिये से बकरा छीना जाए, वह भी बिना मार-पीट के, अतः उन सबने आपस में विचार करके एक योजना बनाई, जिससे उनका काम निकल सकता था। तीनों ठग थोड़ी-थोड़ी दूरी पर गड़रिये के रास्ते में वृक्ष के नीचे बैठ गए। जैसे ही गड़रिया पहले वृक्ष के नीचे पहुँचा, तो एक ठग, जो वहाँ पहले से ही बैठा हुआ था आगे बढ़कर उससे बोला—"महाराज! यह क्या? आप एक कुत्ते को कान्धे पर बिठाए क्यों लिए जा रहे हो। इस कुत्ते का आप क्या करोगे?" यह सुनकर गड़रिये ने कहा—"क्या कहा आपने? यह कुत्ता है।" क्या आपको बकरा दिखाई नहीं देता?" धूर्त्त ठग बोला—"यह तो कुत्ता है।" गड़रिये ने उसकी बात पर कुछ ख्याल न किया, और अपने मार्ग पर चलता बना। कुछ दूर जाने पर उसे दूसरा ठग मिला। देखते ही उसने भी तुरन्त पूछा—"महाराज! आप इस कुत्ते को अपने कन्धे पर बिठाए क्यों लिये जाते हो?" ऐसे मांसाहारी जानवर को आप उठाकर अपने आप को क्यों भ्रष्ट कर रहे हो? गड़रिए ने कुछ न कहा। उसने बकरे को कन्धे से उतारा और सिर से पाँव तक अच्छी तरह देखा, फिर अपने कन्धे पर रखा और चल दिया। वह कुछ ही दूर पहुँचा कि उसे अब तीसरा ठग मिला और गड़रिये को भला बुरा कहने लगा कि आपको एक कुत्ते को कन्धे पर रखते हुए शर्म नहीं आती। गड़रिये का गांव में काफी मान-सम्मान था, ईश्वर-भक्त था। जब उसने तीसरे

ठग की ये सभी बातें सुनी तो गड़रिये के मन में विचार आया कि एक व्यक्ति गलत हो सकता है, दूसरा भी गलत हो सकता है, परन्तु जब तीसरे ने कहा तो उसे विश्वास हो गया कि तीनों गलत नहीं हो सकते, जबकि तीनों अलग-अलग दूरी पर उसे मिले। वह सोचने लगा कि जरूर दृष्टि दोष आ गया है जो यह कुत्ता मुझे बकरा दिखाई पड़ रहा है। लगता है बेचने वाले ने मेरे साथ धोखा किया है। ऐसा विचार करके गड़रिये ने बकरे को कुत्ता समझकर जमीन पर पटक दिया। सायं का समय हो रहा था। रास्ते में नदी में स्नान आदि करके नदी किनारे संध्या करके शुद्ध होकर गांव की ओर चल पड़ा। जब गड़रिया चला गया तो तीनों धूर्त ठग इकट्ठा हो गए और बकरे को लेकर घर का रास्ता लिया।

शिक्षा—इस दृष्टान्त से यह शिक्षा मिलती है कि व्यक्ति को अपनी ही आखों पर विश्वास करना चाहिए। किसी के बहकावे में आकर अपने लक्ष्य को छोड़ देना महामूर्खता है। संसार में ऐसे धूर्त बदमाशों की कमी नहीं है। इनसे सावधान रहना चाहिए। भारतवर्ष के विभिन्न मतान्तरों में भीड़ को देख भीड़ बढ़ती जा रही है, लोग अपने विवेक व बुद्धि से काम नहीं लेते। जिससे अन्धविश्वासों को बढ़ावा मिलता है। वैदिक संस्कृति व ज्ञान ही हमें ऐसे पाखंडी मतान्तरों से बचाता है जो हमें सत्य-असत्य का बोध कराता है। भारतवर्ष में ऐसे असंख्य मतान्तरों के जन्म का मूल कारण ऐसे ही धूर्त्तों के बहकावे में आना है। इससे हमें बचना चाहिए।

बुद्धि और भाग्य

एक समय बुद्धि और भाग्य में झगड़ा हुआ। बुद्धि कहती थी कि मैं बड़ी और भाग्य कहता था कि मैं बड़ा। बुद्धि ने भाग्य से कहा—"यदि तू बड़ा है, तो यह गड़रिया जो वन में भेड़ें चरा रहा है, इसे बिना मेरी सहायता के बादशाह बना दे तो मैं मान लूँगी कि तू बड़ा है।" यह सुनकर भाग्य ने उसको बादशाह बनाने का प्रयत्न प्रारम्भ किया।

भाग्य ने एक बहुमूल्य खड़ाऊँ का जोड़ा, जिसमें लाखों रुपये के जवाहरात जड़े हुए थे, लाकर गड़रिये के आगे रख दिया। गड़रिया उसको पहनकर फिरने लगा। फिर भाग्य ने एक सौदागर को वहाँ

पहुँचा दिया। सौदागर उन खड़ाऊँओं को देखकर चकित हो गया और सौदागर उनसे बोला–"तुम यह खड़ाऊँ का जोड़ा बेचोगे?" गड़रिए ने कहा–"ले लो।" सौदागर ने कहा–"क्या दाम लोगे?" गड़रिए ने कहा–"दाम क्या बताऊँ? मुझे रोज रोटी खाने के लिए गाँव जाना पड़ता है, अगर तुम दो मन भुने चने इस खड़ाऊँ के जोड़े की कीमत दे दो, तो मैं चने चबाकर भेड़ों का दूध पी लिया करूँगा और गांव में जाने के दु:ख से छूट जाऊँगा।" अभिप्राय यह कि इस दुर्बुद्धि गड़रिये ने ऐसी बहुमूल्य खड़ाऊँ, जिसमें एक-एक हीरा लाखों रुपये का था, दो मन भुने चनों में बेच डाली।

यह देखकर भाग्य ने और बल दिया। उस सौदागर को एक

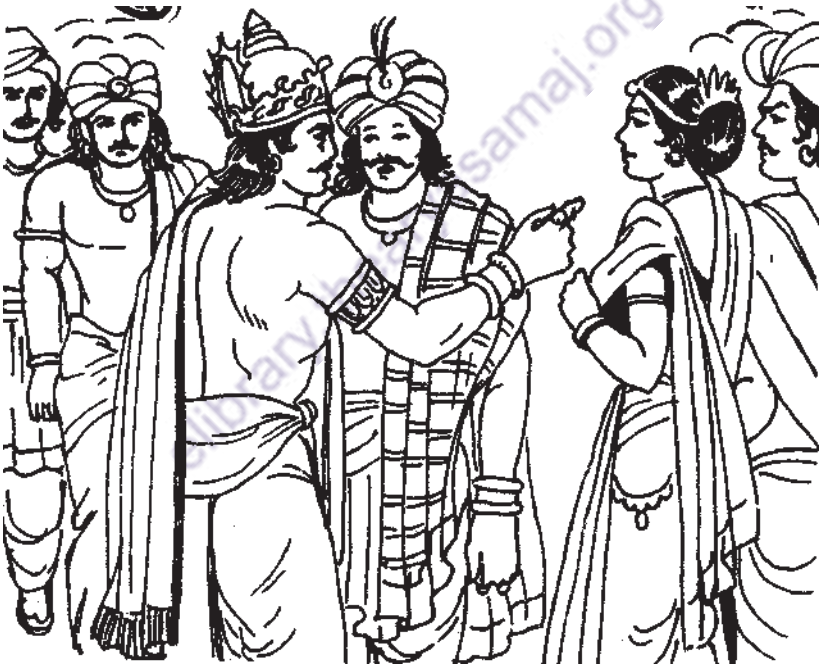

बादशाह के दरबार में पहुँचा दिया। जिस समय वहाँ सौदागर ने खड़ाऊँ बादशाह के आगे रक्खीं, बादशाह देखकर चकित हो गया और उसने सौदागर से पूछा–"तुमने यह खड़ाऊँ का जोड़ा कहाँ से लिया?" सौदागर ने जवाब दिया– "एक बादशाह मेरा मित्र है, उसने ये खड़ाऊँ मुझे दी हैं।" बादशाह ने पूछा–"क्या उस बादशाह के पास

ऐसी और खड़ाऊँ हैं?" सौदागर ने उत्तर दिया—"हाँ, हैं।" बादशाह ने पूछा—"क्या उस बादशाह के कोई लड़का भी है?" सौदागर ने कहा—"हाँ उसके लड़का भी है।" यह सुनकर बादशाह ने कहा—"जनाब, मेरी लड़की की सगाई उस बादशाह के लड़के से करा दो।"

यह सब बातें तो भाग्य के बल से हुई; परन्तु सौदागर को बादशाह की पिछली बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ; क्योंकि उसे ज्ञात था कि खड़ाऊँ की जोड़ी तो मैंने गड़रिए से ली है, न कोई बादशाह न उसका लड़का; परन्तु इस झूठ बात के मुँह से निकल जाने से उसने सोचा कि अगर इस समय मैं अपने झूठ का भेद खोलता हूँ, तो बादशाह न मालूम क्या दण्ड देगा। यह ख्याल कर उसने विचार किया कि जिस तरह हो सके, बादशाह के शहर से निकल चलना चाहिए। अतः उसने बादशाह से कहा—"मैं आपकी लड़की की सगाई करने के लिए जाता हूँ।" यह कहकर जिस ओर से वह आया था, उसी ओर को पुनः रवाना हुआ।

जब वह उस स्थान पर पहुँचा, जहाँ उसने गड़रिए को देखा था, तो क्या देखता है कि वह गड़रिया उससे विशेष मूल्य का खड़ाऊँ का जोड़ा पहिन रहा है। सौदागर यह देख हैरान हो गया। उसने सोचा कि यह कोई सिद्ध पुरुष है, जिसको इस प्रकार की वस्तुएँ कुदरत से प्राप्त हो जाती हैं। उसने सोचा कि यहाँ ठहरकर इसका हाल मालूम कर लेना चाहिए। यह सोचकर उसने यहाँ डेरे लगा दिए और उसके पास ताम्बा, जो लदा हुआ था, उसे उतारकर उसने वृक्ष के नीचे एक ओर रख दिया जब दोपहर हुआ, तो गड़रिया धूप का मारा उस वृक्ष के नीचे आया जहाँ ताँबे के ढेर पड़े हुए थे। वह उस ढेर के सहारे अपना सिर लगाकर सो गया। उसके तकिया लगाने से भाग्य ने उस ताँबे को सोना कर दिया।

जब सौदागर ने यह देखा, तब उसे ख्याल आया कि जिस मनुष्य के सिर लगाने से ताँबा सोना जाता है, उसको बादशाह बनाना कौन-सी बड़ी बात है। यह सोचकर सौदागर ने कुछ गाँव मोल ले लिये और उन गाँवों में दुर्ग बनाना प्रारम्भ कर दिया और कुछ सेना भी रख ली। जब सब सामान तैयार हो गया, तब उस गड़रिये को पकड़कर दुर्ग में ले गया और उसे अच्छे बादशाही कपड़े पहना दिये। मन्त्री, सेवक आदि सभी रख दिये। पुनः उस बादशाह को चिट्ठी लिखी कि—

''हमारे बादशाह ने आपकी लड़की की सगाई स्वीकार कर ली है, जो तिथि आप नियत करें, बारात उसी दिन पहुँच जाए।'' बादशाह ने तिथि नियत कर लिख भेजा।

इधर ब्याह की तैयारियाँ होने लगीं। एक दिन जब दरबार लगा हुआ था, सारे मन्त्री आदि बैठे हुए थे, गड़रिया बादशाही तख्त पर तकिया लगाए बादशाह बना बैठा था, उस समय गड़रिये ने सौदागर से कहा—''तुम मुझे छोड़ दो; देखो, मेरी भेड़ें किसी के खेत में चली जाएँगी, तो वह मुझे पीटेगा।'' यह सुनकर सब लोग हँस पड़े और सौदागर दिल में सोचने लगा, इसका क्या इलाज किया जाए। जो कहीं उस बादशाह से इसने ऐसा कह दिया, तो मैं बेप्रयोजन मारा जाऊँगा। पुनः सौदागर ने उस गड़रिये से कहा—''जो कुछ कहना हो मेरे कान में कहना।''

निदान ब्याह की तिथि समीप आ गई। सौदागर बारात लेकर रवाना हुआ और बादशाह के शहर के समीप आ गया, उधर बादशाह का मन्त्री बहुत-से कामदारों और सेना के सहित अगवानी को आया तो उन्हें देखकर गड़रिये को ख्याल आया कि शायद मेरी भेड़ें उनके खेत में जा घुसीं और ये मुझे पकड़ने को आए हैं, परन्तु बात कान में कहे जाने के कारण किसी को विदित न हुई और लोगों ने पूछा—''शाहजादे साहब क्या कहते हैं ?'' सौदागर ने जवाब दिया—''जितने मनुष्य अगवानी के लिए आए हैं, सबको पाँच-पाँच लाख रुपया दिया जाए।'' सबको पाँच-पाँच लाख रुपया दिया गया।

शहर में प्रसिद्ध हो गया कि एक बड़े भारी बादशाह का लड़का ब्याह के लिए आया है, जो प्रत्येक पुरुष को लाखों रुपये इनाम देता है, सैकड़ों हज़ारों का नाम ही नहीं जानता। बादशाह भी डरा कि मैंने बड़े भारी बादशाह से सम्बन्ध जोड़ लिया है, परमेश्वर प्रतिष्ठा रखे। उस गड़रिये का ब्याह बादशाह की लड़की से हो गया।

यहाँ तक तो बुद्धिमान् सौदागर के सिलसिले से भाग्य कृतकार्य हुआ; परन्तु रात को जब गड़रिया अकेला बादशाही महल में सोया और वहाँ झाड़-फानूस और लैम्प जलते देखे, तो इसको ख्याल आया कि जंगल में जो भूतों की आग सुनी थी, वह यहाँ है। मैं इसमें जलकर मर जाऊँगा। वह गड़रिया यह सोच ही रहा था कि इतने में बादशाह की लड़की गड़रिये के कमरे की तरफ आई जब इसने जेवरों की आवाज सुनी, तो उसे ख्याल आया कि अभी तक चुड़ैल से बचा हूँ, न मालूम

यहाँ कितनी-कितनी और चुड़ैलें आवें, इसलिए यहाँ से भाग चलना चाहिए। यह सोच ही रहा था कि उसे एक जीना ऊपर की ओर दीख पड़ा। वह झट ऊपर चढ़ गया और उसने एक तरफ छज्जे से हाथ डालकर नीचे कूदकर भागने का इरादा किया उस समय अक्ल ने भाग्य से कहा—''देख, तेरे बनाने से यह बादशाह न बना, बल्कि अब गिरकर मरेगा।'' और अपनी नासमझी से वह गड़रिया गिरते ही मर गया।

शिक्षा—भाग्य का अर्थ है 'कर्मफल'। मनुष्य यदि समझदार, बुद्धिमान् और विचारशील हो तो अपनी बुद्धि और परिश्रम से भाग्य को भी बदल सकता है, किन्तु बुद्धिहीन पाये हुए को भी खो देता है। इसलिए बुद्धि और परिश्रम के द्वारा अपने भाग्य का खुद निर्माण करना चाहिए।

बीरबल की खिचड़ी

माघ का महीना था। ठण्ड के मारे शरीर अकड़ा जाता था। उस समय अकबर ने बीरबल से पूछा—"ऐसा भी कोई मनुष्य है जो ऐसे समय में रात-भर पानी में बैठा रहे? मैं उसको पाँच सौ रुपये इनाम दूँगा।" परन्तु कोई इस बात पर तैयार न हुआ। बहुत खोजने पर एक अस्सी वर्ष का बूढ़ा ब्राह्मण इस बात पर तैयार हुआ। निदान वह चौकीदारों के सामने रात-भर पानी में बैठा रहा। जब सुबह को वह इनाम लेने के लिए दरबार में हाजिर हुआ तो बादशाह ने पूछा—"तुम किसके सहारे रात-भर पानी में बैठे रहे?" वृद्ध ब्राह्मण ने कहा—"महाराज! मैं रात-भर आपके किले की कन्डील को देखता रहा।" उस भोले-भाले ब्राह्मण की इस बात को सुनकर बादशाह ने कहा—"मालूम होता है कि तुमको उस कण्डील की गरमी पहुँची है, इसलिए तुमको इनाम नहीं मिल सकता।" ब्राह्मण निराश होकर रोता हुआ घर चला गया। जब बीरबल को यह खबर मालूम हुई तो उसने ब्राह्मण को बहुत धीरज दिया। इसके बाद एक दिन बादशाह जब शिकार को जाने लगे तब उन्होंने बीरबल को भी साथ चलने के लिए कहा। बीरबल ने कहा—"महाराज! मैं भोजन करके अभी आया।" यह कहकर बीरबल तो अपने घर चला गया और उधर बादशाह उनकी इन्तजार करने लगे। जब कुछ विलम्ब हुआ तो बादशाह ने बुलाने के लिए नौकर भेजा। परन्तु बीरबल ने यह कह कर नौकर को लौटा दिया कि अभी मेरी खिचड़ी तैयार नहीं हुई। दो-तीन बार आदमी गया, पर

हर बार यही उत्तर मिला कि अभी मेरी खिचड़ी तैयार नहीं हुई। तैयार होने पर मैं शीघ्र ही भोजन करके चला आऊँगा। बादशाह बड़े रुष्ट हुए और अकेले शिकार खेलने के लिए जंगल में चले गए। संध्या को जब शिकार से लौटे तो पता लगा कि बीरबल अभी तक खिचड़ी बना रहा है। बादशाह को बड़ा अचम्भा हुआ और वे तुरन्त बीरबल की खिचड़ी देखने चले। जब यह बीरबल के घर पहुँचे तो देखते क्या हैं कि बीरबल ने एक बहुत ऊँचा बाँस खड़ा करके उसमें हांडी लटकाई है और नीचे चूल्हे में आग धधक रही है। बादशाह ने पूछा—"बीरबल! यह क्या हो रहा है?" बीरबल बोले—"हुजूर! खिचड़ी पक रही है।" अकबर ने कहा—"तू पागल हो गया है। इतनी दूर से हाँडी में आँच कैसे लग सकती है?" बीरबल ने मौका समझकर कहा—"हुजूर! उस तरह से पहुँचेगी जिस तरह उस वृद्ध ब्राह्मण को कण्डील की आँच पहुँचती थी।" अकबर चुप हो गया और शीघ्र ही उसने ब्राह्मण को पाँच सौ रुपये के बदले पाँच हजार रुपये दिए।

शिक्षा—मनुष्य को चतुराई से कार्य करना चाहिए।

जैसे को तैसा मिला

शहर बगदाद में एक चतुर नाई रहता था। वह बात बनाने तथा हजामत बनाने, दोनों कामों में उस्ताद था। उसके गुणों पर मुग्ध हो वहाँ के धनी लोग उस पर लट्टू हो रहे थे और सिवा उसके किसी दूसरे पर बाल बनवाना पसन्द नहीं करते थे; यहाँ तक कि वह नाई उस देश के खलीफा के भी बाल बनाता। इससे उसको पूरा अभिमान हो गया। एक दिन की बात है कि एक लकड़हारा गधे पर लकड़ियाँ लादे हुए उस नाई की दुकान के सामने से होकर बेचने के लिए बाजार में जा रहा था। नाई को भी लकड़ी की जरुरत थी। उसने उससे दाम पूछे। लकड़हारे ने कहा—"चार आने।" खैर, लकड़ियों को नाई ने खरीद लिया और दाम चुका कर कहा—"लकड़ियों को यहाँ गिरा दो।" लकड़हारे ने लकड़ियों को नाई के कहने के अनुसार गिरा दिया और गदहा लेकर चलने लगा; परन्तु नाई ने उसे रोककर कहा—"अजी कुल लकड़ियाँ क्यों नहीं देते?" मैंने कुल लकड़ियाँ खरीदी हैं।" लकड़हारा बेचारा तो सारी लकड़ियाँ दे चुका था, फिर देता क्या? उसने उत्तर दिया—"भाई अब तो मेरे पास एक भी लकड़ी नहीं है, दूँ कहाँ से?" यह सुनकर नाई ने गधे की काठी की ओर

संकेत करके कहा–"यह मुझे दे दो।" बेचारे लकड़हारे ने उसे बहुत समझाया कि भाई लकड़ियों के साथ काठी नहीं बिका करती, परन्तु उस नाई ने एक भी न मानी और काठी ले ही ली। लकड़हारा रोता-पीटता काजी के पास गया और अपनी फरियाद सुनाई; पर वह काजी भी उस नाई से बाल बनवाता था, इसलिए उसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया। लकड़हारा निराश होकर दूसरे काजी के पास गया; पर वहाँ से भी वह बेचारा निकाला गया। अन्त में उसने खलीफा के दरबार में अपनी अरजी पेश की। खलीफा अपने न्याय के लिए बड़ा प्रसिद्ध था और था भी वह न्यायप्रिय। खलीफा ने उसके मुकदमे का सारा हाल सुनकर लकड़हारे से कह दिया कि भाई! तुम्हारा मामला अज़ीब है। खैर, सन्तोष धारण करके अपने घर लौट जाओ। साथ ही खलीफा ने कान में कुछ और कह दिया, जिससे वह बेचारा अपने घर चुपचाप लौट गया।

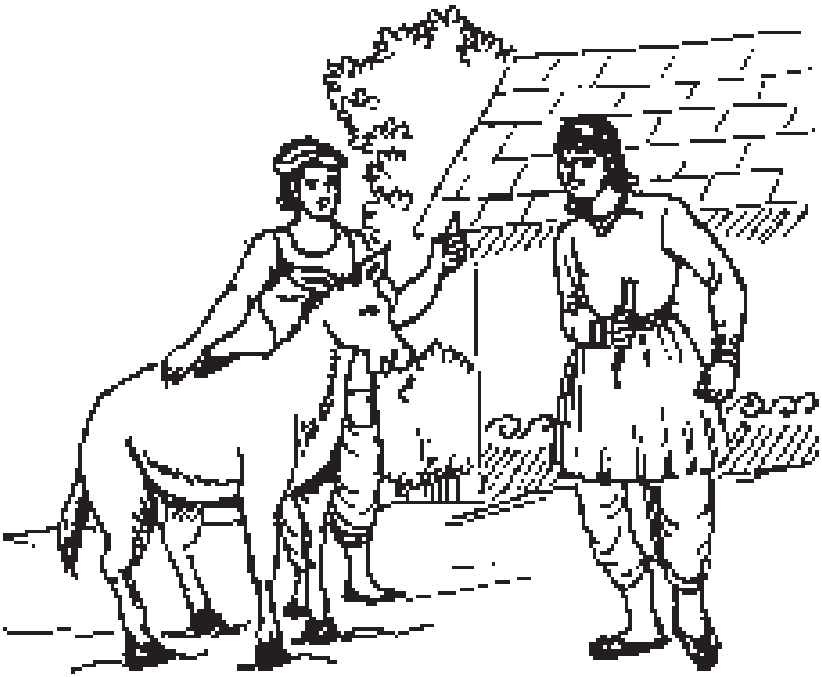

कुछ दिनों के बाद वही लकड़हारा फिर नाई की दुकान में गया और बड़ी नम्रता से सलाम करके ऐसा भाव दिखलाया कि मानों उसके हृदय में पहले के झगड़े की बातें बिल्कुल ही नहीं है। नाई यह

देख बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे बैठने को कहा। लकड़हारे ने बैठकर नम्रता से कहा—"भाई! मेरा ब्याह होनेवाला है। इसलिए आप मेरी और मेरे एक साथी की हजामत बना दें। इसके बदले में जो कुछ आज्ञा होगी मैं आपको दूँगा।" नाई ऐसे-वैसे साधारण मनुष्य के बाल नहीं बनाया करता था।अतः उसने कहा—"अच्छा, अगर तुम एक दीनार दो तो मैं हजामत बना दूँ।" लकड़हारे ने स्वीकार कर लिया और उससे अपनी हजामत बनवाने लगा। जब नाई उस लकड़हारे की हजामत बना चुका, तब उसने कहा—"अच्छा, जाओ अपने साथी को भी बुला लाओ।" लकड़हारा बाहर गया और थोड़ी देर बाद आपने साथी गधे को नाई के सामने ला खड़ा किया और कहा—"यह मेरा साथी है, इसकी हजामत बना दो।" गधे को देख नाई बिगड़ा और कहा—"कहीं गधे की हजामत बनती है? मैं इसकी हजामत नहीं बना सकता।" इस विषय में दोनों का झगड़ा यहाँ तक बढ़ा कि खलीफा के न्यायालय में विचारार्थ जाना पड़ा। न्यायालय में जाकर खलीफा से लकड़हारे ने कहा—"हुजूर! देखिए, नाई ने वायदा खिलाफी की है, क्योंकि उसने वायदा किया था कि एक दीनार में तुम्हारी और तुम्हारे साथी की हजामत बना दूँगा। खैर, मेरे बाल तो बन गए। मेरे साथी इस गधे की हजामत इन्हें बनानी चाहिए थी; पर यह नहीं बनाता।" खलीफा ने नाई से पूछा—"लकड़हारा सच कहता है या झूठ?" नाई कहने लगा—"हाँ यह तो ठीक है कि हमने एक दीनार में इसके दोस्त की हजामत बनाना मँजूर किया था, पर हमें क्या मालूम कि इसका साथी गधा है? कहीं गधे की भी हजामत बनती है?" यह सुन खलीफा ने उत्तर दिया—"निस्सन्देह गधों की हजामत नहीं बना करती, इसे मैं भी मानता हूँ; पर जलाने की लकड़ियों के साथ काठी भी तो नहीं बिका करती। अब तो तुम्हें जरुर ही लकड़हारे के साथी गधे की हजामत बनानी पड़ेगी।"

अब क्या था? खलीफा की आज्ञा से सैकड़ों आदमियों के सामने उस धूर्त और चालाक नाई को गधे की हजामत बनानी पड़ी, जिससे उसकी बड़ी बेकद्री हुई। उसकी सारी शेखी धूल में मिल गई।

शिक्षा—जब जैसे को तैसा मिलता है तो उसकी बुद्धि ठिकाने आ जाती है।

फूट से हानि

एक बार एक ब्राह्मण, एक क्षत्रिय और एक नाई तीनों कहीं जा रहे थे। सफर काफी लम्बा था। रास्ते में तीनों को भूख और प्यास ने सताया। तीनों विचार करने लगे। सामने ईख का खेत दिखाई दिया। तीनों ने सोचा कि इस समय इस जंगल में कोई नहीं जो हम लागों को इस खेत से गन्ने उखाड़ते हुए देख ले; दूसरे यदि देख भी लेगा, तो हम लोग उससे कह देंगे कि भाई साहब हमने भूख के कारण थोड़े-से गन्ने उखाड़े हैं।

वह खेत एक जाट का था और दोपहर का समय था। जाट ने सोचा कि दोपहर का समय है, चलो एक चक्कर खेत ही की ओर लगा आएँ। ऐसा न हो कि कोई नुकसान कर जाए। जाट कन्धे पर लाठी रख खेत की ओर चला। वहाँ जाकर क्या देखते हैं कि उनके खेत में तीन व्यक्ति गन्ने उखाड़ रहे हैं। जाट ने सोचा कि यदि तुम एकाएक इन तीनों को कुछ कहते हो तो प्रथम तो यह जंगल है, यहाँ कोई भी नहीं; दूसरे, मैं अकेला और ये तीन हैं; इसलिए युक्ति से काम लेना चाहिए।

जाट ने पास जाकर तीनों से पूछा—"आप कौन हैं?" एक ने कहा ब्राह्मण, दूसरे ने क्षत्रिय और तीसरे ने नाई। तब तो जाट ने सर्वप्रथम ब्राह्मण से कहा—"महाराज, आप तो देवता-रूप हैं, हमें उपदेश करते हैं, आपने बड़ी दया की, आपके आने से मेरा खेत पवित्र हो गया। यदि आपको कुछ और गन्ने चाहिएँ तो उखाड़ करके दे दूँ। आप ही का खेत है।" ब्राह्मण प्रशंसा सुन कर बड़ा खुश हुआ। इसके बाद जाट ने क्षत्रिय से कहा—"धन्य हो कुमार साहब आपने तो मेरे ऊपर बड़ी दया की। दु:ख-कष्टों में हमारी सहायता करते हैं, शत्रुओं से हमारी रक्षा भी करते हैं। आप कहें तो दो-चार गन्ने और दे दूँ। आप ही का खेत है।" इसके बाद जाट ने तीसरे से कहा—"क्यों बै नव्वै तुमने गन्ने क्यों उखाड़े?" नाई बोला—"मैं आपका हज्जाम हूँ।" जाट बोला—"भला ब्राह्मणजी ने गन्ने उखाड़े तो वह हमारे पूजनीय ठहरे। कुमारजी ने गन्ने उखाड़े तो यह हमारे रक्षक हैं। पर तूने गन्ने क्यों उखाड़े? गधे को खिलाया न पुण्य में, न पाप में। ऐसा कहकर जाट ने हज्जाम की लाठी से खूब हजामत बनाई। यह देख कर ब्राह्मण और क्षत्रिय बोले—"अच्छा हुआ यह नव्वा पिट गया। इस को जब भी घर से बाल बनवाने को बुलाते तो घण्टों घर से नहीं निकलता था। चलो,

आज ठीक हो गया। नव्वा पिट गया हम बच गए। उधर नाई सोचने लगा कि मैं तो पिट गया और ये बच गए। ये लोग गाँव में जाकर कहेंगे–देखो नव्वा जाट से पिट गया। हे भगवान्! कहीं इन दोनों को भी दो–दो हाथ लग जाते तो अच्छा होता। जब नाई पिट–पिटा के थोड़ी ही दूर पहुँचे थे, जाट कुमारजी से बोला–"क्यों कुमारजी? यह खेत क्या मुफ्त में तैयार होता है। भला ब्राह्मण ने गन्ने उखाड़े, वह तो हमारे माननीय ठहरे कभी शादी–ब्याह भी करा देते हैं। पर आपने गन्ने क्यूँ उखाड़े? ऐसा कहकर जाट ने अपनी लाठी उठाई और उसकी भी अच्छी–खासी धुनाई की। नव्वा यह देख बहुत खुश हुआ। ब्राह्मणजी बोले–"अच्छा हुआ। यह भी बड़ा टर्रेबाज था। सारी अकड़ दूर हो गई। उधर क्षत्रिय भी नाई की तरह सोचने लगा कि हम दोनों पिट गए, पण्डित बच गया। हे भगवन् यह भी पिट जाता तो बहुत ही अच्छा होता। इस प्रकार जब कुमारजी थोड़ी दूर चले तो जाट ब्राह्मण की ओर मुखातिब हुआ और बोला–"क्यों महाराज इस खेत में मेहनत नहीं करनी पड़ती, आप क्या कथा, संस्कारों में दक्षिणा छोड़कर चले जाते

हो? गरीब पर बिल्कुल भी दया नहीं करते हो, अच्छा-खासा माल खाते हो, जरा सी भी दया नहीं आती, तुमने गन्ने क्यों उखाड़े? यह सुन कर ब्राह्मण की सांस फूलने लगी। जाट ने अपनी लाठी उठाई और लगा करने ब्राह्मण की मरम्मत। अच्छी-खासी मरम्मत की। ब्राह्मण नीचे से ऊपर तक लाल हो गया। इस तरह तीनों अलग-अलग पिट कर गाँव लौट आए।

शिक्षा—यह आपसी फूट का परिणाम था कि तीनों एक व्यक्ति से पिट गए। यदि तीनों में एकता होती तो इनमें से कोई भी न पिटता। यही दशा हम सब भारतीयों की है। आपसी फूट के कारण ही भारतवर्ष पर विदेशियों के हमले होते रहे और हमारी धन-सम्पत्ति लूट कर ले गए। जिसका परिणाम आज तक भुगत रहे हैं। आपसी फूट से बहुत बड़ी हानि होती है। आपसी फूट न घर में अच्छी है, न समाज में, न देश में। आपसी फूट से बचना चाहिए।

चतुराई से सफलता

एक राजा ने अपने मन्त्री से पूछा कि चारों वर्णों में कौन अधिक चतुर होता है? मन्त्री ने कहा—"राजन्! लाला (वैश्य) सबसे चतुर होते हैं।" तब राजा ने कहा कि इस बात की परीक्षा ली जाएगी। संयोग से राजन् लालाजी के द्वार से होकर जा रहे थे। इतने में राजा को कुछ सुनाई पड़ा। लालाइन लालाजी से कह रही थी कि अब घर का निर्वाह कैसे होगा? घर में खाने को कुछ भी नहीं है। लाला ने कहा—धैर्य रखो, नौकरी मिलते ही मैं घर रुपयों से भर दूँगा। राजा को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ और परीक्षा के लिए अगले दिन लाला को दरबार में बुलाया। राजा ने लाला से पूछा—"नौकरी करोगे?" लाला ने कहा—"हाँ!" महाराज। राजा ने पूछा—"कितनी तनख्वाह लेंगे?" लालाजी बोले—"राजन् तनख्वाह की उतनी चिन्ता नहीं, जितनी नौकरी की है। आप मुझे एक पैसा भी ना देवे, परन्तु नौकर अवश्य रख लेवें। और मुझे कार्य बताएँ।" राजा खुश हुआ कि बिना तनख्वाह के नौकर मिल गया। राजा ने लाला से फिर पूछा—"तुम्हारा निर्वाह कैसे होगा?" लाला बोले—"महाराज रुपयों का तो मैं ढ़ेर लगा दूँगा, बस, आप काम बताएँ। लाला को राजा ने अस्तबल की निगरानी का हुक्म दे दिया।

अगले दिन लाला अस्तबल में पहुँचे। जहाँ पहले से ही सैकड़ों नौकर अस्तबलों की देख-रेख कर रहे थे। लालाजी जाते ही घोड़ों की लीद उठाकर सूँघने लगे। यह देखकर दूसरे नौकर बोले—"यह आप क्या कर रहे हैं?" लालाजी ने कहा—"कुछ नहीं, यही देख रहा हूँ कि घोड़ों को पूरा दाना दिया जाता है कि नहीं?" नौकर घबराए, वह तो बहुत कम दाना-घास घोड़ों को दिया करते थे। यह सुन कर उन्होंने लालाजी को प्रसन्न रखने के लिए रुपयों की थैली भेंट की। इसलिए कि राजा को कोई गलत रिपोर्ट न करे। लाला रोज हजारों रुपये डकार जाते थे। राजा ने एक महीने के बाद लालाजी को बुला कर पूछा कि 'आपने कितना रुपया इकट्ठा किया?' लाला ने कहा—'राजन्! एक लाख रुपये इकट्ठे किए। राजा बड़े आश्चर्य में पड़ गए। राजा ने लाला को यहाँ से हटाकर तारों को गिनने का काम दे दिया।

लालाजी रोज तारे गिनने लगे। वे बड़े-बड़े सेठों के पास जा कर कहते कि तुम्हें अपनी कोठी गिरानी होगी, क्योंकि इससे राजा के आदेश और मेरे कार्य में बाधा होती है। बेचारे सेठ हजारों रुपये देकर लाला ही से पीछा छुड़ाते। इसी भाँति एक महीना बीत गया। राजा ने लाला से पूछा—"इस महीना कितना रुपया इकट्ठा किया? लाला बोले—"राजन्! दो लाख रुपये इकट्ठे किये। अगले दिन राजा ने लाला को आज्ञा दी कि तुम नदी के तट पर बैठकर उसकी लहरें गिना करो। आज्ञा पाते ही लाला बस्ता लेकर नदी के किनारे जा पहुँचे।

जो भी जहाज व नाव आती उसे रोक देते और कहते कि जब तक लहरों को न गिन लिया जाए तब तक यहीं ठहरो, जब गिन लें तब जाना। बेचारे जहाज रुकवाने से हानि समझ कर हजारों रुपयों की भेंट दे देते, तब लाला उन्हें जाने देता। राजा के पूछने पर लाला ने कहा कि इस बार केवल पचास हजार ही इकट्ठा किया। राजा ने यह सोचा कि इसकी एक रुपये की भी आमदनी नहीं होनी चाहिए। यह सोच एक हजार मन मोतीचूर के लड्डू बनाकर एक घर में रख दिए और लाला को पहरेदार रख दिया। लाला ने इसी को गनीमत समझा। लालाजी रोज लड्डूओं को इधर-उधर बदलने लगे। अदलने-बदलने में जो चूरा झड़ता उसे अपने घर भिजवा देते थे। इस प्रकार महीने के अन्त में राजा ने लालाजी को बुलाकर पूछा कि—कहो लाला, इस बार क्या कमाया। राजा को विश्वास था कि इस महीने लालाजी कुछ भी नहीं कमा सकेंगे। लालाजी ने कहा कि—"महाराज! इस महीने केवल पाँच सौ रुपये ही कमा सका। यह सुनकर राजा ने कहा— "अब मैं आपको नौकर नहीं रख सकता। लालाजी बोले—"जैसी आपकी इच्छा, किन्तु महाराज बस इतनी कृपा कर दीजिए कि दरबार के समय एक मिनट एकान्त में बात कर लीजिए। इसके बदले में आपसे कुछ नहीं लूँगा, बल्कि आपको दस हजार रुपये नित्य भेंट करता रहूँगा।" राजा ने यह स्वीकार कर लिया। राजा नित्य एक मिनट के लिए लाला से मिलते और दस हजार रुपये वसूल कर लेते। कुछ दिनों बाद राजा ने लाला से कहा—"तुम्हें इससे क्या लाभ होता है? लाला ने कहा—"महाराज! इसी एक मिनट की बदौलत एक लाख रुपये रोजाना की कमाई होती है।" राजा चौंककर बोले—"वह कैसे?" लालाजी ने कहा—"आपके दरबारियों से आपके रुष्ट होने की बात करता हूँ, तो वे मुझे आजकल एक लाख रुपये प्रतिदिन दे देते हैं।" राजा यह सुन बहुत क्रुद्ध हुए और उसकी सारी सम्पत्ति छीन ली और उसे राज्य से बाहर कर दिया। रास्ते में उसको कुछ भिखमंगे ब्राह्मण मिले। लाला ने उनसे कहा—"अजी भीख माँगने से आपको कोई विशेष लाभ नहीं, इसलिए तुम मेरे घर पर नौकरी कर लो। और वे सब बीस रुपये महीने पर नौकर हो गए। वे सब प्रतिदिन भीख माँगकर लाते और लाला को दे देते। महीने के बाद बीस रुपये पाकर सन्तोष से जीवन बिताते। उधर लाला की आमदनी का कुछ हिसाब न रहा। जब सह समाचार राजा को मालूम हुआ, तब वे बहुत प्रसन्न हुए और लाला की चतुराई की प्रशंसा करने लगे। फिर उनको अपना मन्त्री नियुक्त कर लिया।

शिक्षा—बुद्धिमान् और चतुर बनो। बुद्धिमान् और चतुर व्यक्ति जहाँ भी जिस अवस्था में होता है, अपने जीवन को आगे की ओर ले जाता है। जिन्दगी में उतार-चढाव आते रहते हैं। वे जीवन की परीक्षाएँ हैं। आपत्तियों से घबराना नहीं चाहिए।

चतुर वैद्य

पुराने जमाने की बात है। एक सेठ था। सेठ जिद्दी तो था ही, वह बदपरहेज भी था। सेठ जवान ही था कि उसको खाँसी ने आ घेरा। घरेलू इलाज से खाँसी ठीक नहीं हुई। होती भी कैसे? खाँसी के लिए दही अच्छी नहीं होती। लेकिन सेठजी दही के बिना भोजन ही नहीं करता था। इससे खाँसी बढती ही जाती थी।

सेठजी बहुत धनवान् थे, इसलिए शहर के अच्छे-से-अच्छे डाक्टर, वैद्य, हकीम सबको दिखाया गया किन्तु सेठ की खाँसी ठीक नहीं हुई। ठीक न होने का कारण था केवल दही। सेठजी को सभी लोगों ने बहुत समझाया, किन्तु सेठजी की समझ में बात आई ही नहीं।

एक वैद्यजी बहुत बुद्धिमान् थे, वे सेठजी का इलाज करने के लिए तैयार हो गए। सेठ बोला, "वैद्यजी! एक बात मेरी सुन लो। वैद्यजी ने कहा—"बोलो।" "मैं दही खाना नहीं छोडूँगा।" वैद्यजी समझ गए और कहा, कौन कहता है आपसे दही छोड़ने को? आप एक वक्त दही खाते हो तो, दो वक्त खाना शुरू कीजिए, यदि दो वक्त खाते हैं तो चार वक्त खाया कीजिए। सेठजी खुश हुए कि बहुत अच्छे वैद्य हैं। वैद्यजी ने सेठजी को बताया की दही खाने से तीन लाभ होते हैं। सेठजी ने बड़ी उत्सुकता से पूछा—"वे क्या-क्या लाभ हैं? वैद्यजी बोले सर्वप्रथम तो घर में चोरी नहीं होती। दूसरा लाभ कुत्ता कभी नहीं काटता और तीसरे उसको बुढापा तो कभी आता ही नहीं।" सेठ ने सब सुना। वैद्यजी की बात पर गौर भी किया। किन्तु उसको कहीं उसका सिर-पैर मिला ही नहीं। आखिर हार कर सेठजी ने वैद्यजी से पूछ ही लिया। वैद्यजी बात मेरी समझ में नहीं आई। वैद्यजी बोले, "देखो सेठ! दही खाते रहने से खाँसी ठीक नहीं होती। खाँसी होते रहने से दिन-रात आदमी खाँसता रहता है। यदि वह खाँसता रहा तो फिर चोर कैसे चोरी कर सकता है? सेठ ने कहा "यह बात तो

आपकी ठीक है। अब दूसरी बात भी समझाएँ।

"दूसरी बात भी सीधी-सादी है।" वैद्यजी बोले, "आप अपने को ही देख लीजिए। जब से आपको खाँसी हुई है आप कमजोर बहुत हो गए हैं और उसका फल यह है कि आपके हाथ में हमेशा लाठी रहती है। जहाँ जाते हो लाठी के बिना नहीं जाते। फिर कुत्ता लाठी को देखकर पास फटकेगा नहीं? काटने की तो बात ही दूर रही।" दूसरी बात सुन कर सेठजी चुप हो गए। सेठ को फिक्र तो हो गया फिर भी बोला, तीसरी बात क्या है?

"तीसरी बात तो बस सेठजी ऐसी ही है। अब तुम ही जानों कमजोर आदमी कितने दिन तक जी सकता है। खाँसी में दही खानेवाला मरीज तो जवानी भी पूरी नहीं काट सकता। इसलिए बुढ़ापा उसके पास फटकेगा ही कैसे?"

वैद्यजी ने बात समाप्त की और चुप हो गए।

उस दिन के बाद सेठजी ने दही नहीं खाई। दही में उनको अपनी मौत दिखाई देती थी। सेठ ने मौत के डर से दही छोड़ी तो खाँसी ने भी उसका साथ छोड़ दिया।

शिक्षा—व्यक्ति को गुण-दोष को देखकर कोई कार्य करना चाहिए। किसी भी बात में दुराग्रही नहीं होना चाहिए। समझदार व्यक्ति ही संसार में सुख और सफलता प्राप्त करता है।

आँख के अन्धे, गांठ के पूरे

एक सेठजी को अफीम की लत पड़ गई, साथ ही सेठजी को वहम की एक बीमारी और हो गई। उसका आलम यह था कि वे अपनी पत्नी पर भी विश्वास नहीं कर पाते थे। चाहे कितनी भी बड़ी बात हो तब भी नहीं। सेठजी यह समझते थे कि अफीम खाने के साथ दूध-मलाई खाते रहना चाहिए। वे सोचते थे कि पत्नी दूध-मलाई ठीक तरह से नहीं दे रही है। तब सेठजी के मन में एक विचार आया कि दूध-मलाई देने के लिए एक नौकर रखा जाए। सस्ते का जमाना था। सेठजी ने नौकर रख लिया। सेठजी नौकर को चार पैसे देते थे और उसका काम था कि वह चार पैसे का मलाईदार दूध सेठजी को लाकर पिला दे। नौकर होशियार था। वह सेठजी के वहम को जान गया। उन दिनों तीन आने का एक सेर दूध मिलता था। नौकर एक पैसा अपनी जेब में डालता और तीन पैसे का दूध सेठजी को पिलाता

था। बहुत दिनों तक यह चलता रहा।

सेठजी को फिर वहम ने घेर लिया तो उन्होंने दूसरे नौकर को पहले नौकर के ऊपर लगा दिया। दोनों नौकरों में साँठ-गाँठ हो गई। उसने एक पैसा नए नौकर को दिया, एक पैसा अपनी जेब में रखा, दो पैसे का दूध सेठजी को पिलाने लगा। सेठजी को आखिर तसल्ली तो होने वाली नहीं थी। उसे दूध में कुछ काला नजर आया। तो सेठजी ने तीसरा नौकर दोनों नौकरों पर निगरानी रखने के लिए रख लिया। सेठजी ने दूध-मलाई का काम तीसरे नौकर के हाथ में सौंप दिया। अब तीसरे नौकर ने भी ऐसा ही किया। तीन पैसे आपस में बाँट लिए और एक पैसे का दूध सेठजी को पिलाना आरम्भ कर दिया।

इसी क्रम से चौथे नौकर की भी बारी आ गई। तीनों नौकर हैरान हो गए। कि अब किस तरह काम चलेगा। चौथे नौकर ने कहा, यदि मुझे मेरा हिस्सा नहीं मिला तो मैं सारी पोल खोल दूँगा। यदि वह हिस्सा देते हैं तो दूध के लिए पैसा बचने वाला नहीं है।

आखिर शाम आई, दूध का इन्तजार करता-करता सेठ सो गया। चौथे नौकर को जब विश्वास हो गया कि सेठ सो गया है तो वह दूध की दूकान पर गया और उसने किसी बहाने से थोड़ी मलाई माँगी। घर आकर मलाई सेठ की मूछों पर चुपड़ दी। सबेरे जो सेठजी उठे तो उन्हें पता चला कि उनकी मूँछों पर मलाई लगी है। सेठजी बहुत खुश हुए और उनके मुख से निकल गया, "अब आया ईमानदार नौकर। देखो, कैसा मलाईदार दूध पिलाया है कि अभी तक मलाई लगी है।"

शिक्षा—मूर्ख, किन्तु धनसम्पन्न व्यक्तियों का यह हाल होता है कि उचित-अनुचित की परख नहीं कर पाते। मनुष्य को शंका-सन्देह छोड़कर स्थिति पर गम्भीर दृष्टि रखनी चाहिए। दूसरों पर अन्धविश्वास नहीं करना चाहिए।

बुद्धिमान् पण्डित और मूर्ख बादशाह

शेखचिल्ली की मूर्खता की कहानियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। शेखचिल्ली कोई व्यक्ति नहीं था। वह मूर्ख व्यक्ति का प्रतीक था। जो कोई व्यक्ति मूर्खता का कार्य करता तो उसे शेखचिल्ली की उपाधि मिल जाया करती थी। ऐसा ही एक मूर्ख बादशाह था एक बार वह अपने मन्त्री के साथ अपने राज्य का दौरा करने निकला। दौरा करते हुए एक दिन शाम को वे एक गाँव के समीप

से गुजर रहे थे कि वहाँ चौपाल पर इन्हें कुछ भीड़ इकट्ठी दिखाई दी। देखा कि पेड़ के तले टिमटिमाते दिए के प्रकाश में कोई व्यक्ति एक पुस्तक लिए बैठा है।

बादशाह ने अपने वजीर को बात का पता लगाने के लिए भेजा। वजीर भी कम नहीं था। बात पता लगाने के साथ-साथ वह पण्डित को भी साथ ही ले आया। बादशाह आया जानकर सब लोग उठ खड़े हुए और उसे चारों ओर से घेर लिया। पण्डित को आया देख, वजीर के कुछ बताने से पहले ही, बादशाह ने उससे पूछा, "यहाँ क्या हो रहा है?" बादशाह सलामत! राजा रामचन्द्र की कथा सुना रहा हूँ?

बादशाह के तन बदन में आग लग गई। बोला, हमारे होते हुए तुम दूसरे राजा की कथा क्यों करते हो?"

पण्डित एक क्षण के लिए तो चकराया। फिर तुरन्त बोला, "हुजूर! राजा रामचन्द्र की तो रामायण बनी हुई है। लेकिन बादशाह सलामत की तो कोई रामायण है ही नहीं, फिर कथा किस तरह की जाए? अगर कोई हो तो मेहरबानी करके भिजवा दीजिए, मैं कल से बादशाह सलामत की ही कथा करूँगा।"

बादशाह परेशानी में पड़ गया। फिर बोला, "नहीं, हमारी कोई रामायण नहीं है।" पण्डित ने मौके का फायदा उठाया। बोला, "हुजूर! अगर आदेश करें तो यह दास इस काम को कर सकता है?" बादशाह के मुख पर मुस्कराहट छा गई। बोला, "तुम यह काम कर सकते हो?" पण्डित ने कहा—"हुजूर! कर तो सकता हूँ, लेकिन उसके लिए समय चाहिए और धन भी।"

"कितना समय चाहिए?" बादशाह ने पूछा।

"कम से कम छह महीने तो लगेंगे ही।"

"ठीक है और धन?"

"हुजूर! दस हजार से तो कम में काम नहीं चलेगा।"

"ठीक है, मिल जाएँगे।" बादशाह बोला—"आज से ही शुरू कर दो, कल से क्यों?"

"लेकिन हूजूर! धन।"

बादशाह ने कहा, "धन कल मिल जाएगा।"

'जी हुजूर!' मैं आज से ही लग जाता हूँ। लेकिन छः महीने से पहले यह काम नहीं होगा।

बादशाह चला गया और अगले दिन पण्डितजी के पास रुपया भी पहुँच गया। छः मास जब पूरे होने को आए तो एक दिन बादशाह को खबर मिली कि किसी गाँव का कोई पण्डित उनसे मिलने आया है। बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। वह समझ गया कि कौन पण्डित आया है। उसने पण्डित को अपने दरबार में बुलाकर पूछा, "पण्डितजी! हो गई हमारी रामायण पूरी?"

"सरकार! बस पूरी ही समझिए। लेकिन.....।"

बादशाह ने उतावली में पूछा, "बोलो-बोलो! क्या बात है? क्या पैसे कम पड़ गए हैं?"

पैसों की बात नहीं मालिक। कुछ.....।

"कुछ क्या है? जल्दी बताओ।"

पण्डित को होश आया तो उसने पूछा, "महाराज! राजा राम की रानी सीता को तो रावण चुरा कर ले गया था। आप उस दुष्ट का नाम बता दीजिए जो हुजूर की बेगम को चुरा कर ले गया था। बस उतने के लिए आपकी रामायण अधूरी पड़ी है। और सही जानने के लिए मैं यहाँ आया हूँ। यह बात किसी हरकारे से पुछवाना मैं ठीक नहीं समझता था।

बेगम की चोरी की बात सुन तो बादशाह की सिट्टी-पिट्टी गुम। बादशाह बोला, "ना पण्डितजी! ना! हमें माफ करो, हमें नहीं लिखवानी ऐसी रामायण।"

"हुजूर! वह तो पूरी भी हो गई।"

हमने कह जो दिया, हमें नहीं चाहिए ऐसी रामायण।" बादशाह ने गुस्से में कहा।

पण्डित इतने से कहाँ माननेवाला था। वह समझता था कि फिर किसी दिन इसको झक सवार हो और घूमता हुआ आकर कहे कि तुम राजा रामचन्द्र की कथा क्यों सुना रहे हो, तब मैं क्या करूँगा। उसने पूछा, "महाराज, मैं गाँव वालों को क्या सुनाऊँ?" बादशाह के मुख से निकल गया कि तुम उसी राजा राम की कथा सुनाओ जिसकी रानी को रावण चुराकर ले गया था।"

पण्डित को और क्या चाहिए था। उसकी रामायण कथा तो सफल हो गई थी। धन का धन मिल गया। भविष्य में कथा सुनाते रहने की छूट भी।

शिक्षा—बुद्धिमान् व्यक्ति विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्यपूर्वक

आचरण करके अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हैं। मनुष्य को युक्ति से कार्य निकालना चाहिए।

बुद्धिमान् सियार

किसी जंगल में एक सियार और एक सिंह रहते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि कहीं ढूँढने पर भी सिंह को अपना भोजन नहीं मिला। वह वन में भटकता रहा, किन्तु उसका भटकना बिल्कुल ही व्यर्थ गया। भटकते-भटकते सिंह एक गुफा में पहुँच गया। लेकिन वह गुफा भी खाली थी। शाम का समय हो गया था, सिंह ने सोचा, अब इस गुफा से बाहर जाना व्यर्थ है, रात में कोई शिकार मिलेगा नहीं, इस गुफा में रहनेवाला लौटता ही होगा, उसे ही मैं अपना भोजन बनाऊँगा। यह सोचकर वह चुपचाप गुफा में रहने वाले पशु के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

यह गुफा सियार की थी। सियार अपना दिन भर का शिकार खेलकर वापस लौट रहा था कि उसको कुछ गन्ध-सी आई। उसने ध्यान से देखा तो उसे लगा कि सिंह के पंजों के निशान हैं। सियार ने फिर गौर से देखा तो उसे पता चला कि सिंह के पंजों के भीतर जाने के निशान तो हैं लेकिन बाहर निकलने के नही हैं।

सियार समझ गया कि दाल में कुछ काला है। उसका साहस नहीं हुआ कि वह गुफा के भीतर जाए। वह सोचता रहा। आखिर में उसे एक तरकीब सूझी। उसने कहा, "गुफारानी!" क्या बात है, तुम्हें अपना वायदा याद नहीं? हमारा वायदा था कि मैं जब भी बाहर से आऊँ तो तुम्हें सजाने के लिए फूल वगैरह लेता आऊँ और तुम मेरे आने पर मेरा स्वागत करते हुए बोलोगी, "आओ शृगालराज! इस गुफा में तुम्हारा स्वागत है। आज तुम चुप क्यों हो?"

सिंह ने सुना तो विचार करने लगा कि अब क्या किया जाए। उसने सोचा कि गुफा सियार का स्वागत करती होगी किन्तु आज उसे गुफा में बैठा देख भयभीत हो गई होगी, इसलिए स्वागत नहीं कर रही है। उसने सोचा, चलो मैं ही स्वागत करता हूँ। यों विचार कर यद्यपि उसने अपनी आवाज को मधुर बनाने का यत्न किया किन्तु सिंह की दहाड़ तो निकलेगी।

सिंह ने स्वागत किया तो सियार के सन्देह की पुष्टि हो गई।

उसने दुम दबाई और यह जा , वह जा। सियार अपनी चतुराई से बच गया और सिंह अपनी मूर्खता से उस रात भूखा ही रहा।

शिक्षा–बुद्धिमान् भयंकर विपत्ति से भी अपनी रक्षा कर लेता है। अतः हमें बुद्धिमान् बनना चाहिए। बुद्धिमान् ही जीवन में प्रगति करते हैं।

मुझे ही फाँसी क्यों?

एक राजा के यहाँ चोरी करने पर फांसी का दण्ड मिला करता था। एक दिन चार चोरों ने राजा की राजधानी में चोरी की। चारों चोर चोरी करते हुए पकड़े गए। उनको राजा के दरबार में पेश किया गया। राजा के न्याय के विधान-अनुसार उन्हें फाँसी का दण्ड दिया गया। एक-एक करके तीन फांसी पर चढ़ गए। चौथा चोर चालाक था उसने कहा कि मुझे फांसी पर मत चढ़ाओ क्योंकि मैं एक ऐसी औषधि जानता हूँ कि जिससे लोहे को सोना बना सकते हैं। चाहे कितना भी लोहा इकट्ठा कर लें, आप उस औषध को लोहे से लगा दीजिए, तुरन्त लोहे का सोना बन जाएगा। इस खबर को लोगों ने राजा तक पहुँचा दिया। राजा ने आदेश दिया कि चोर को फांसी उसके औषधि बताने के बाद दी जाए। उसके बाद चोर को राजा के सामने लाया गया। राजा ने चोर से पूछा कि "क्या तुम लोहे को सोना बना सकते हो?" चोर ने कहा–"हाँ, राजन् आप जितना चाहे लोहा एकत्र कर लें मैं उसका सोना बना दूँगा। राजा ने यह सुन कर पूरे राज्य का लोहा एकत्र करवाया और अपने सारे दरबार, दीवान, मन्त्री, सेनापति आदि तथा प्रजा के सभी साधारण पुरुषों को जमा कर उस चोर से कहा कि अब तुम इस सारे लोहे का सोना बनाओ। उस चोर ने थोड़ा-सा ढोंग करके जंगल से एक पत्ता तोड़कर थोड़ी देर बाद राजा साहब से कहा कि हुजूर, अब यह औषधि भी तैयार है और लोहा भी एकत्र है। लेकिन इसमें एक शर्त है कि जिस पुरुष ने कभी भी चोरी न की हो उसे छुआने से लोहे का सोना बन सकता है। आपकी पूरी प्रजा व सभी में जिसने कभी चोरी न की हो तो वह इस औषधि को उठाकर लोहे से छुआ दे, बस, छुआते ही सोना बन जाएगा। अब तो राजा की सभा में सन्नाटा छा गया। कोई भी व्यक्ति छुआने को तैयार नहीं हुआ क्योंकि यदि छुआने से सोना नहीं बना तो इससे यह जान पड़ता कि यह भी चोर है। राजा ने सर्वप्रथम साधारण

प्रजाजनों से कहा कि भाई जिसने कभी चोरी न की हो तो वह इस औषधि को लेकर लोहे से छुए। लेकिन एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसने कभी चोरी न की हो। फिर राजा को भी अपने बचपन की याद आने लगी। वह भी पीछे हट गया। तब चोर ने कहा—"महाराज, जब ऐसी बात है तो मुझे ही फांसी क्यों?

शिक्षा—बुद्धिमान् व्यक्ति विपत्तिकाल में भी सुरक्षा का उपाय निकाल लेता है। अतः बुद्धिमान् बनो।

लालच का फल बुरा

एक सेठजी बहुत लोभी थे। वे केवल एक ही समय भोजन करते थे। सेठजी के मन में किसी एक ब्राह्मण को भोजन खिलाने का विचार काफी दिनों से चल रहा था। फिर भी सेठजी किसी ब्राह्मण को भोजन नहीं करा सके। कारण यह था कि सेठजी को ऐसे एक ब्राह्मण की तलाश थी जो कम से कम खाए। यद्यपि सेठजी बहुत धनवान् थे लेकिन अत्यन्त लोभ के कारण उनकी यह मनोदशा थी। सेठजी को जो भी ब्राह्मण मिलता वे उससे यही प्रश्न करते कि "आप कितना खाते हैं?" सेठजी का यह विचार गांव वाले ब्राह्मणों ने भी जान लिया कि उनका क्या विचार है। यही समझ कर गांव व आस-पास के ब्राह्मणों ने मिलकर सेठजी की समस्या को हल करना चाहा और एक योजना बना डाली।

एक दिन सेठजी अपने व्यापार के कार्य से शहर जा रहे थे कि रास्ते में उसकी भेंट एक ब्राह्मण से हुई कुछ देर बाद उन्होंने वही प्रश्न किया कि—"आप कितना खाते हैं?" ब्राह्मण ने कहा—"मैं तो केवल सप्ताह में एक बार ही खाता हूँ। वह भी छटाँक भर के करीब।" यह सुन कर सेठजी बहुत प्रसन्न हुए। यह सुन सेठजी ने ब्राह्मण को अगले दिन का निमन्त्रण दे दिया और ब्राह्मण से बोले कि—"मैं तो कल व्यापार के कार्य से शहर जाऊँगा, आप मेरे घर जाकर भोजन कर लेवें।" ब्राह्मण ने सेठजी को आशीर्वाद दिया और सेठजी चल पड़े। शहर से लौटते ही सेठानी को कहा कि अमुक ब्राह्मण को मैं कल के लिए निमन्त्रण दे आया हूँ सो उनको भोजन करा देना। साथ ही कहा कि पण्डित जी जो कुछ भी मांगें वह सब कुछ देना। यह तो उनको मालूम था कि पण्डितजी कितना खाते हैं लेकिन यह बात सेठजी ने

सेठानी को नहीं बताई।

अगले दिन सेठजी सुबह उठकर अपने कार्य से शहर चले गये। सेठानी ब्राह्मण के लिए तरह-तरह के व्यंजन बनाने लगी। षड्रस का भोजन तैयार किया। सेठानी सेठजी की तरह लोभी न थी। उसकी ब्राह्मणों के प्रति काफी श्रद्धा थी व धार्मिक कार्यों में भी बढ़-चढ़ कर भाग लेती थी। अतिथि-सत्कार को अपना परम-धर्म मानती थी। वह जानती थी—**'अतिथिदेवो भव'।** थोड़ी देर बाद ब्राह्मण ने आकर सेठानी को आशीर्वाद दिया और आसन पर बैठ गए। सेठानी ने पूछा—"कहिए पण्डितजी, आपको क्या-क्या चाहिए?" पण्डितजी बोले—दस मन अनाज, एक मन घी, तीन मन शक्कर, दो मन चावल, चार जोड़ी धोती-वस्त्र आदि, चार सेर नमक इत्यादि, यह सब तो हुआ घर के लिए।" सेठानी ने सेठजी की आज्ञा के अनुसार सब कुछ दे दिया। पण्डितजी ने वह सामान घर के लिए बैलगाड़ी में चलता करवा दिया। इसके बाद वे सेठानी से बोले—अब हमें भी जल्दी से भोजन कराओ। सेठानी ने ब्राह्मण को अच्छी तरह से भोजन कराया। जो कुछ भी बनाया था पण्डितजी चट कर गए और बोले—"अब हमारी दक्षिणा में सौ अशर्फियाँ व एक दूध देती हुई गाय भी मिल जाए तो हम आशीर्वाद देकर अपने घर को जाएँ।" सेठानी ने पण्डितजी की आज्ञानुसार यह सब कुछ दे दिया। और पण्डित आशीर्वाद देकर चलते बने।

पण्डिताइन इतना कुछ सामान देखकर सेठजी का गुण-गान करने लगी। पण्डितजी कपड़ा ओढ़कर पलंग पर लेट गए और ब्राह्मणी से बोले—"अगर सेठजी आएँ तो तुम रोने का ढोंग करना और उनसे कहना कि पण्डितजी जब से आपके घर भोजन करके आए हैं, तभी से सख्त बीमार हैं, उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं। न जाने आपने भोजन में क्या-क्या खिला दिया है।

सेठजी शाम को घर लौटे। दिन भर की थकावट से चूर, व भूखे-प्यासे आते ही सेठानी से पूछा—"पण्डितजी भोजन कर गए?" सेठानी ने कहा—"हाँ, कर गए। साथ ही इतना कुछ सामान घर के लिए, इतना कुछ खाया, दक्षिणा में सौ अशर्फियाँ व दूध देती हुई गाय भी साथ ले गए।" यह सुन कर सेठ के होश उड़ गए और मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़े। काफी देर बाद सेठजी को होश आया। उठे। सीधे पण्डितजी के घर पहुँचे।

ब्राह्मणी दरवाजे पर ही बैठी थी। सेठजी गुस्से में लाल थे, बोले—वह धूर्त्त, पाखण्डी, नालायक, मूर्ख, धोखेबाज, पण्डित कहाँ है? यह सुनकर ब्राह्मणी रोने लगी और बोली—जब से आपके घर भोजन करके आए हैं, तभी से उनको न जाने क्या हो गया, बहुत सख्त बीमार हैं। अब तो उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं। यह सुन कर सेठजी के हाथ-पाँव फूलने लगे और हाथ जोड़कर बोले— "पडिताइन, चिल्लाओ नहीं। मैं इलाज के लिए अभी वैद्यजी को भेजता हूँ और साथ ही तुमको पाँच सौ रुपये और दिए जाता हूँ उनकी दवा-दारु के लिए, परन्तु यह मत कहना कि पण्डितजी सेठजी के घर खाने के लिए गए थे, उन्होंने न जाने खाने में क्या खिला दिया।

शिक्षा—कभी-कभी जब 'जैसे को तैसा' मिल जाता है तो उसकी सारी सयानपत धरी रह जाती है। मनुष्य को सामान्य व्यवहारवाला होना चाहिए। असामान्य व्यवहार वाला व्यक्ति समाज में खटकता रहता है।

विद्यार्थी के कर्त्तव्य

शास्त्रों में विद्यार्थी के निम्नलिखित कर्त्तव्य मिलते हैं। वेदारम्भ संस्कार के समय पिता पुत्र को यह उपदेश देता है—

(१) आज से तू ब्रह्मचारी है (२) नित्य सन्ध्योपासना और भोजन के पूर्व शुद्ध जल का आचमन किया कर (३) दुष्ट कर्मों को छोड़ कर धर्म किया कर (४) दिन में शयन मत किया कर (५) आचार्य के अधीन रहकर नित्य सांगोपांग वेद पढ़ (६) एक-एक वेद के लिये बारह-बारह वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य धारण कर अर्थात् पूरे वेद पढ़ने तक

ब्रह्मचारी रह (७) आचार्य के आधीन रहकर धर्माचरण करता रह, किन्तु यदि आचार्य भी अधर्माचरण करने को कहे तो उसे मत मान (८) क्रोध और मिथ्या भाषण छोड़ दे (९) मैथुन को छोड़ दे (१०) पलंग आदि पर सोना छोड़ दे (११) गाना-बजाना तथा नृत्य आदि निन्दित कर्म तथा गन्ध और अंजन का सेवन मत कर (१२) अति स्नान, अति भोजन, अधिक निद्रा, अधिक जागरण, लोभ, मोह, भय तथा शोक छोड़ दे (१३) प्रतिदिन रात्री के चौथे पहर में जागकर, आवश्यक शौचादि करके दन्तधावन, स्नान, संध्योपासना, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना तथा योगाभ्यास का आचरण नित्य किया कर (१४) क्षौर मत कर (१५) माँस और शुष्क अन्न मत खा, मद्य आदि मत पी (१६) बैल, घोड़ा, हाथी, ऊँट आदि की सवारी मत कर (१७) ग्राम में निवास तथा जूता और छत्र को धारण मत कर (१८) इन्द्रिय को स्पर्श करके वीर्य का स्खलन मत कर; किन्तु वीर्य की रक्षा करता हुआ सदा ऊर्ध्वरेता वीर्यवान् बन (१९) तेल, उबटन आदि से अंग का मर्दन, अति खट्टा, अति तीखा, कसैला, नमकीन, रेचक द्रव्यों का सेवन मत कर (२०) नित्य युक्ति से आहार-विहार करके विद्या ग्रहण करने में यत्नशील बन (२१) सुशील, थोड़ा बोलने वाला और सभा में बैठने योग्य गुण ग्रहण कर (२२) मेखला और दण्ड का धारण, भिक्षाचरण, अग्निहोत्र, आचार्य का प्रियाचरण, प्रातः-सायं आचार्य को नमस्कार करना, विद्यासंचय, जितेन्द्रिय रहना आदि ये तेरे नित्य करने के कर्त्तव्य हैं। और जो निषेध किए हैं वे न करने के नियम हैं।

विद्यार्थी का ध्येय

विद्यार्थी को यह बात अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिये कि संसार में मनुष्य जो भी प्रयत्न करता है वह अपने ध्येय की पूर्ति के लिये करता है। यदि किसी का ध्येय छोटा-मोटा होता है तो वह बहुत थोड़ा यत्न करता है। यदि कोई अपना बड़ा व ऊँचा ध्येय निश्चित करता है, तो उस ऊँचे ध्येय की प्राप्ति के लिये उसे बड़े-बड़े प्रयत्न करने पड़ते हैं। छोटे ध्येय की प्राप्ति के लिये छोटे-छोटे साधन जुटाने पड़ते हैं, और बड़े व ऊँचे ध्येय की प्राप्ति के लिये बड़े-बड़े साधन जुटाने पड़ते हैं तथा सतत परिश्रम करना पड़ता है।

एक आदमी घर से बाजार की ओर निकला, उसका कोई निश्चित ध्येय नहीं था कि उसे बाजार में किससे मिलना है और क्या-क्या लेना है। जब वह घर से थोड़ी दूर चला ही था, तो उसने देखा कि एक

आदमी ताश के तीन पत्ते लिये बैठा था, और दूसरा उन पत्तों पर रुपये लगा रहा था। उसने सोचा कि मुझे भी एक के चार मिल जाएँगे। उसने भी जेब से रुपये निकालने और रखने शुरू कर दिये, थोड़ी देर में जब वह सब हार चुका और थोड़े से पैसे उसके पास शेष रह गये, तब वह आगे चला।

थोड़ी दूर चलकर उसने देख कि म्युनिसिपैलिटी के आदमी सड़क पर कुत्ते पकड़ रहे हैं। वह भी उन्हीं के साथ हो लिया और घण्टों घूमता रहा। म्युनिसिपैलिटी वालों का समय पूरा हो गया। वे चले गये। तब आप आगे बढ़े। वह फिर बाजार में गया और वहाँ कई एक स्थान में जाकर खड़े होने और इधर-उधर व्यर्थ समय नष्ट करने में सायंकाल हो गया, तब घर लौटा। घर वालों ने पूछा—''कहाँ गये थे, न रोटी खाई, न पानी पिया, कई आदमी घर पर मिलने के लिए आये थे, वे भी प्रतीक्षा करके चले गये।''

बेचारा क्या कहता! विना किसी उद्देश्य के घर से निकला था। अब वह मन में चिन्ता कर रहा था और पछता रहा था।

बहुत से विद्यार्थी भी अपने जीवन का कोई उद्देश्य ही नहीं निश्चित करते हैं, और उनका विद्यार्थी जीवन इसी प्रकार इधर-उधर की व्यर्थ की बातों और कार्यों में नष्ट हो जाता है और उन्हें पीछे पछताना पड़ता है।

बहुत से कालिजों के विद्यार्थियों से बातचीत करने का अवसर मिला। जब मैंने उनसे पूछा—कहिये देवप्रकाश जी, आपने एफ०ए० तो पास कर लिया, अब बी०ए० में कौन से विषय लेंगे?

देवप्रकाश—हिन्दी व सम्पत्तिशास्त्र लेने का विचार है।

मैं—आप भावी जीवन में क्या करना चाहते हो?

देवप्रकाश—बी०ए० पास करके तब सोचूँगा कि क्या करना है। अभी तो कुछ निश्चय नहीं किया।

मैं—बी०ए० पास करने में अब कसर कौन सी रह गई। मान लीजिए कि आपने बी०ए० पास कर लिया, फिर क्या करेंगे? यह बात तो पहले सोच लेने की होती है। जो काम जीवन में करना हो उसी के अनुसार ही विषय लेने चाहिएँ।

देवप्रकाश—जीवन में क्या करना है, यह तो कभी सोचा नहीं। आप ही आज पहली बार पूछ रहे हैं। आप ही बताइये कि मैं क्या करूँ?

मैं—मैं कैसे बता सकता हूँ कि आप क्या करें। यदि आपको वकील बनना है तो कुछ और विषय लेने पड़ेंगे। यदि मास्टर बनना है तो कुछ और विषय सोचने पड़ेंगे। यदि व्यापारी बनना है तो कुछ और विषय लेने चाहियें। यह तो अपनी-अपनी रुचि और परिस्थिति के अनुसार विषय चुनने पड़ते हैं। जो ऐसा नहीं करते, उन्हें कठिनाई उठानी पड़ती है।

मेरे एक मित्र ने बी० एस-सी० पास किया, फिर एल०टी० किया और फिर एल०एल०बी० पास किया। अब सोचने की बात है कि जब उन्हें वकील बनना था तो अध्यापक की ट्रेनिंग में क्यों गए? और बी०एस-सी० क्यों पास किया। एक दूसरे महाशय ने एल०एल० बी० पास करके फिर एल०टी० पास किया।

सोचना तो यह है कि कोई भी परीक्षा पास करने में समय और धन व्यय करना पड़ता है, विशेष परिश्रम भी करना पड़ता है। यह सब कुछ करके भी यदि फल उलटा निकले तो इतने पढ़े लिखे मनुष्य के लिये क्या कहना चाहिये।

नीची कक्षा में ही जब आप विषय लेने लगे थे, आपको उसी समय सोचना चाहिये था कि भावी जीवन में आपको क्या करना है। कितने आश्चर्य की बात है कि एफ० ए० पास करके भी वहीं के वहीं हो।

देवप्रकाश—जब किसी ने मुझे ध्यान नहीं दिलाया तो मेरा क्या कसूर है। नौवीं कक्षा में न तो मैंने सोचा, और दूसरे लड़कों की देखा-देखी विषय ले लिये।

मैं—यह बात ठीक है, परन्तु अब तो आपकी समझ में आ गया। अब तो आप अपना उद्देश्य निश्चित करो। उद्देश्य निश्चित करते समय इस बात का ध्यान रखना कि कोई मामूली लड़खड़ाता हुआ उद्देश्य अपने सामने न रखना, ऊँचे से ऊँचा उद्देश्य अपने सामने

रखना।

देवप्रकाश—ऊँचे से ऊँचा उद्देश्य मैं कैसे निश्चित कर सकता हूँ। अपनी चादर के अनुसार तो पैर फैलाना चाहिये।

मैं—चादर और पैर फैलाने का सम्बन्ध उद्देश्य से नहीं है। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर शक्ति का अथाह समुद्र है। उस शक्ति का प्रयोग मनुष्य अपने ध्येय की पूर्ति के लिये करता है। यदि किसी का उद्देश्य छोटा-सा है तो वह थोड़ी शक्ति व्यय करेगा, उसकी शेष शक्ति व्यर्थ चली जाएगी। यदि किसी का उद्देश्य बहुत महान् है, तो उसे उस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिये बड़ा प्रयत्न करना पड़ता है, और बड़ी शक्ति काम में लानी पड़ती है।

बहुत से लोग इस बात को नहीं जानते कि उनके अन्दर कार्य करने की कितनी शक्ति है। इसीलिये वे अपना उद्देश्य भी नहीं बना सकते। और निरुद्देश्य शक्ति व्यय करते हुए किस प्रकार मारे-मारे फिरते हैं, यह आपने देख ही लिया।

देवप्रकाश—ऊँचे से ऊँचा उद्देश्य बना लेना तो आसान है, पर उसकी पूर्ति कैसे की जाये?

मैं—इसका अर्थ यह जान पड़ता है कि मैंने जो कुछ कहा है, उसे आपने समझा नहीं। अपना ऊँचे से ऊँचा उद्देश्य निश्चित करके विद्यार्थी को चाहिये कि विद्याप्राप्ति के लिये अपने अन्दर एक अग्नि प्रज्वलित करे और यह समझ ले कि उस महान् ध्येय की पूर्ति के लिये पूर्ण विद्या का होना आवश्यक है। अधूरी विद्या महान् उद्देश्य को प्राप्त नहीं होने दे सकती।

उद्देश्य निर्धारित करने का अर्थ है कि आधा रास्ता तो तय हो ही गया। यदि एक विद्यार्थी यह निश्चित करता है कि मुझे एक डाक्टर बनना है तो इस निश्चय के साथ ही वह अपने ध्येय की पूर्ति के लिये कटिबद्ध हो जाता है। चाहे कोई उसके विरुद्ध कुछ भी कहे, उसकी पूर्ति में कितनी ही बाधाएँ क्यों न आवें, वह अपने उद्देश्य से डिग नहीं सकता। जब ऐसी अवस्था आ जाती है तो उस ध्येय की पूर्ति के लिये साधन स्वत: बनते चले जाते हैं। उस विद्यार्थी को केवल यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि वह इस उद्देश्य के अतिरिक्त और किसी दूसरी बात या प्रलोभन से संतुष्ट न हो और अपने ध्येय को बिना प्राप्त किये चैन न ले।

एक दिन एक बड़ा गरीब और आश्रयहीन विद्यार्थी एक बाग में

बैठा था। उसका नाम विलिंगडन था। वह अपने भविष्य के विषय में कुछ सोच ही रहा था कि चर्च के घण्टे टन-टन बजने लगे। सुनकर विलिंगडन सहसा बोल उठा—

''टन टन टन विलिंगडन लार्ड मेयर आफ लण्डन।'' जब तक घण्टे बजते रहे, विलिंगडन ऐसा ही कहता रहा। बन्द होते ही मानो वह नींद से जाग उठा हो और कहने लगा—कि बस, आज मेरा भविष्य निर्धारित हो चुका। दुनिया इधर की उधर क्यों न हो जावे, परन्तु मैं लार्ड मेयर आफ लण्डन बन कर रहूँगा।

शिक्षा—इसी प्रकार आप भी अपना उद्देश्य निर्धारित करो और उसकी प्राप्ति के लिये तन मन धन अर्पित करने के लिये उद्यत रहो, और विश्वास करो कि सफलता आपके चरण चूमेगी।

विद्यार्थी के दोष और गुण

यह निश्चित है कि जो विद्यार्थी गुणों को ग्रहण करेगा, वह सदा अपने जीवन में सफल रहेगा। यहाँ विद्यार्थियों के दोष तथा गुण बताये गये हैं—छात्रों को उनपर ध्यान देकर दोष छोड़ने तथा गुण ग्रहण करने का यत्न करना चाहिये।

विद्यार्थियों के दोष—(१) काम न करना (२) स्कूल न जाना (३) कक्षा में बातें करना या शोर मचाना (४) कक्षा मे बुरा बर्ताव करना (५) गुरुजी के हिसाब पढ़ाते समय पीछे बैठकर हिन्दी लिखना, या कापी पर लकीरों के खेल खेलना (६) अपने साथियों को धक्का देना (७) नित्य व्यर्थ डींगों में समय नष्ट करना (८) प्रत्येक काम

को प्राय: कल पर छोड़ते जाना (९) दीवारों, शौचालयों, किताबों आदि पर व्यर्थ की लज्जाजनक बुरी बातें लिखना (१०) स्याही छिड़कना और इससे अनेक वस्तुएँ खराब करना (११) चोरी करना (१२) झूठ बोलना (१३) गुस्ताखी करना (१४) गुरुजनों की आज्ञा न मानना (१५) परीक्षा पत्र आउट करने की कोशिश करना (१६) क्लर्कों को धन देकर अपने अंक बढवाना, (१७) परीक्षकों का पता लगाने की कोशिश करना (१८) अपने दोष छिपाने का प्रयत्न करना (१९) मित्रों के दोष छिपाकर उन्हें दण्ड से बचाना (२०) अध्यापकों और गुरुजनों की निन्दा, आलोचना करना और सुनना (२१) असभ्यता, उद्दण्डता और धृष्टता का व्यवहार करना (२२) बीड़ी, सिगरेट, हुक्का, शराब आदि पीना (२३) सिनेमा की धुन तथा उसके पात्रों और गानों की चर्चा में रहना (२४) अपने पठन-पाठन की सामग्री—कलम, पेन्सिल दवात, कापी, पुस्तकों तथा अन्य वस्तुओं को ठीक स्थान पर संभालकर न रखना और कौनसी चीज कहाँ गई—इसकी परवाह न करना (२५) पुस्तकों को खराब करना।

भारतीय विद्यार्थियों के सम्बन्ध में एक अंग्रेज विद्वान् का मत है कि—विद्यार्थियों को नियमित रूप से घर पर काम करना नहीं सिखाया जाता, इसलिए वे जीवन में स्कूल छोड़ने के बाद भी स्वत: किसी कार्य करने के लायक नहीं बनते। वे बिना किसी की देख-रेख के कोई भी कार्य करने में असमर्थ होते हैं। सख्त मेहनत करने की आदत उनमें नहीं होती। हाँ वे बिस्तरे पर लुढ़कना और किताबों के सामने झूमते रहना खूब जानते हैं। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि भारत के विद्यार्थी काम तो बहुत करते हैं; परन्तु वे मेहनत से काम नहीं करते। केवल किताबें लेकर बैठे रहना, काम नहीं कहा जा सकता।

इन ऊपर के दोषों का संकेत इसलिए किया गया है कि विद्यार्थी ऐसा प्रयत्न करें कि इनमें से कोई भी दोष उनमें न आने पावे।

नीचे उन गुणों का निर्देश किया जाता है, जिनको प्राप्त करने का प्रयत्न सदैव करना चाहिये—

(१) आदर और प्रसन्नता के साथ गुरुजनों की आज्ञा पालन (२) समय का सदुपयोग (३) निश्चित नीति, नियम और समय-विभाग के अनुसार काम करना (४) परिणाम को दृष्टि में रखकर फुर्ती, धैर्य, निर्भयता, दृढता और धुन के साथ अपने काम में निरन्तर लगे रहना।

(५) कठिन से कठिन कार्य को देखकर उससे घबराना नहीं, वरन् उसको साहस, वीरता और उत्साह के साथ करना (६) अपने सहपाठियों के साथ सहयोग करना और उनके प्रति सदा प्रेमपूर्वक बर्ताव व शान्ति रखना (७) गुरुजनों के प्रति सद्भाव और सद्व्यवहार (८) कक्षा में, घर में और खेल के मैदान में सभ्यता और सदाचार का बर्ताव (९) संगीत, साहित्य, देशप्रेम और उत्तम कार्यों के लिये कठिन परिश्रम का अभ्यास (१०) अपने ऊपर विश्वास करके स्वाभिमान पूर्वक प्रत्येक कार्य को स्वयं करना और दूसरों का मुँह न ताकना।

शिक्षा—विद्यार्थी सदा सद्गुणों को ग्रहण करने का प्रयत्न करके अपने जीवन में सफलता प्राप्त करनी चाहिए।

धर्म की परिभाषा

भारत में आज से लगभग ५१०० वर्ष पहले दिल्ली में पाण्डवों का राज्य था। दिल्ली को तब इंद्रप्रस्थ कहते थे। आज भी नई दिल्ली में इंद्रप्रस्थ के नाम से कुछ स्थान और विभाग प्रसिद्ध हैं। पाण्डव पाँच भाई थे। वे सब बड़े प्रतापी थे। उनके नाम हैं। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव। भगवान् श्रीकृष्ण उनके मित्र, सलाहकार और शुभचिंतक थे।

एक बार पाण्डव लोग वन में विचर रहे थे। उन्हें बड़ी प्यास लगी। नकुल ने एक पेड़ पर चढ़कर देखा। पास ही में एक जलाशय दिखलाई पड़ा। सारस पक्षी भी दिखाई पड़े। युधिष्ठिर ने नकुल को आज्ञा दी कि वह तरकश में पानी भरकर ले आवें। आज्ञा पाकर नकुल उस तालाब के पास पहुँचे और पानी के लिये चुल्लू भरा। तभी उन्हें आकाशवाणी सुनाई पड़ी, हे नकुल, पानी पीने से पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दे दो। नकुल ने इस चेतावनी की परवाह नहीं की और बिना अनुमति के ही पानी पी लिया।

पानी पीते ही वह पृथ्वी पर लुढक कर अचेत हो गए।

जब नकुल को आने में देर हुई, तो युधिष्ठिर ने सहदेव को भेजा। उनसे भी यक्षराज ने प्रश्नों के उत्तर देने को कहा। विना अनुमति पानी पीने के कारण सहदेव भी धरती पर लुढक गए। इसी प्रकार अर्जुन और भीम भी विना अनुमति पानी पीने के कारण बेहोश होकर गिर पड़े। तब धर्मराज युधिष्ठिर उनकी खोज में स्वयं गए। यक्षराज ने उनसे भी कहा—''हे युधिष्ठिर, पानी पीने से पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दे दो। यदि तुमने सही और संतोषजनक उत्तर दिए तो मैं तुम्हारें भाइयों को क्षमा कर दूँगा।''

युधिष्ठिर ने नम्रता से जवाब दिया—''आप प्रश्न पूछिए श्रीमान्!''

यक्षराज ने पूछा—''धर्म की परिभाषा क्या है?''

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—''ईश्वर ने मनुष्य-मात्र के लिये धर्म बनाया है। हमारे ऋषियों ने कहा है, जिससे इस लोक में सुख मिले और परलोक में कल्याण हो, वही धर्म है। यदि हम धर्म पर चलेंगे, तो धर्म हमारी रक्षा करेगा। यही नियम है। हे यक्षराज! सब प्राणियों को एक समान देखना ही धर्म है।''

यक्षराज ने पूछा—''धर्म का आधार क्या है?''

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—''धर्म की नींव सत्य और सदाचार पर बनी है। इसके विना धर्म बेजान हो जाता है। धर्म पर चलना ही सदाचार है। सत्य स्वयं ईश्वर है।''

यक्षराज ने पूछा—''परन्तु यह तो बताओ, धर्म का पालन कैसे किया जाय?''

धर्मराज युधिष्ठिर ने जवाब दिया—''धर्म का पालन करना अपने आचरण या चाल-चलन को अच्छा बनाना ही है। हमें सदाचारी बनना चाहिए। आपस में शिष्टाचार (अच्छा बर्ताव) वर्तना चाहिए। सदाचार के नियमों पर सबको चलना चाहिए।''

यक्षराज ने पूछा—''धर्म के नियम क्या है?''

युधिष्ठिर ने जवाब दिया—''धर्म के ११ अंग हैं—यश अर्थात् नाम कमाना, सत्य, दम (मन को वश में रखना), क्षमा पवित्रता, आर्जव (हृदय में कुटिलता न रखना), लज्जा (बुरे काम से शरमाना), संतोष, दान, तप और ब्रह्मचर्य। ईश्वर ने इस जगत् में सुख का तालाब बना रखा है। इसका रक्षक और मालिक धर्म है। जो व्यक्ति धर्म का पालन करता है, वही सदाचारी है। माता-पिता-गुरु की

आज्ञा मानकर ही सदाचारी बना जा सकता है। सदाचारी को निरभिमानी, सुशील, नम्र, परोपकारी और देश-भक्त होना चाहिए। महात्माओं के चलन से उन्हें शिक्षा लेनी चाहिए।''

धर्मात्मा युधिष्ठिर के उत्तरों से यक्षराज प्रसन्न हो गए वे बोले—''हे युधिष्ठिर! मैं तुम्हारे भाइयों को छोड़ता हूँ, तुम सब जल पीकर अपनी प्यास बुझाओ। अपने भाइयों से कहना कि वे सदाचारी बनें और शिष्टाचार बर्तें। इसी से उनको यश मिलेगा, उनका नाम होगा।''

शिक्षा—जो व्यक्ति विद्वान् होता है वह आड़े समय में अपनी तथा दूसरों की भी रक्षा कर सकता है। अत: हमें शास्त्रों का गहन ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

सदाचार

सदाचार (अच्छा आचरण) ही एक ऐसा गुण है, जिससे मनुष्य सभ्य और सुशील कहलाने के योग्य होता है। जो बालक साधारण सदाचार के नियमों का पालन नहीं करता है, उसका समाज में आदर नहीं होता। सहपाठी भी उसे पसन्द नहीं करते। उस पर गुरुजनों की कृपा नहीं होती; वह अक्सर विना पढ़े असभ्य ही रह जाता है। जो सदाचारी है, वह गरीब होने पर भी समाज में इज्जत पाता है। उसकी सब लोग प्रतिष्ठा करते हैं। उसे यश मिलता है।

अच्छा व्यवहार बहुत कुछ आदतों पर निर्भर है। यह गुण ईश्वर का दिया हुआ नहीं है। हम जिस प्रकार के संगी-साथी बनाते हैं, वैसी ही हमारी आदतें बन जाती हैं। ये आदतें बुरी भी हो सकती हैं, भली भी। कहने का मतलब यह है कि हम बालपन से सदाचारी बन सकते हैं, परन्तु हमें घर में माता-पिता और बड़े-बूढ़ों के कहने पर चलना चाहिए। स्कूल में गुरु का कहना करना ही अच्छी आदत डालना है।

सदाचार की पहली सीढ़ी शिष्टाचार का बर्ताव है। बड़ों का आदर करना, सबका अदब करना, सबसे प्रेम से मिलना, मीठी वाणी बोलना, अपने समान सबको समझना साधारण शिष्टाचार है। बालकों को सदाचार व शिष्टाचार बचपन में ही सीखना चाहिए।

बालक जब छोटी आयु का होता है, तो अक्सर माता-पिता उसकी तुतली बातों को सुनने के लिये बुरे शब्दों को भी सहन कर लेते हैं। इससे उनमें बुरी बातों की आदत पड़ जाती है। बड़े होने पर बालक को स्वयं सोच लेना चाहिए कि उसके छोटे भाई-बहन अशिष्ट शब्दों का प्रयोग

न करें। स्कूल में अक्सर सहपाठी एक-दूसरे के प्रति 'साले' आदि अशिष्ट शब्दों का व्यवहार करते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि अनजाने ही अन्य स्थानों पर भी अशिष्ट शब्द निकल जाते हैं। कभी-कभी ऐसे बालक एक-दूसरे का अपमान कर बैठते हैं। इससे झगड़ा हो जाता है, कटुता बढ़ती है। आपस में अनबन होती है।

ऐसे समय यदि बालक आपस में ही एक-दूसरे को टोक दें, और अपने चाल-चलन के बारे में ध्यान रखें, तो वे पक्के सदाचारी बन सकते हैं। इस सम्बन्ध में माता-पिता और गुरुजनों की भारी जिम्मेदारी है। अगर शुरू में ही ऐसा उपाय न हुआ, तो आगे चलकर भारी धोखा होगा। संस्कार की जड़ बालपन ही में पड़ती है। बड़े होने पर ये आदतें ज्यों की त्यों बनी रहती हैं।

बालकों में नकल करने की शक्ति बहुत अधिक होती है। बड़ों को जो काम करते हुए बालक देखते हैं, वे भी वैसा ही करने लगते हैं। माता के चलन और कामों का प्रभाव बालिकाओं और बालकों पर बहुत पड़ता है। इसलिये बड़ों को चाहिए कि अपने से छोटों के सामने कभी ऐसा कोई काम न करें, जो सदाचार के विरुद्ध हो। यही कारण है कि सदाचारी पंडित के यहाँ बालक सदाचारी बनता है। दुष्ट के घर में बालक दुष्ट और बुरे स्वभाववाला बनेगा। इसीलिये कहा गया है—'संगत कीजै साधु की।'

भरे पूरे परिवार में अक्सर देखा जाता है कि माँ की ममता किसी बालिका पर अधिक है। वह उसे एकांत में ले जाकर अलग से मिठाई आदि देती है। बालिका चुपचाप खा लेती है। अन्य बालकों या भाई-बहन को जब पता चलता है, तो उनमें मनमुटाव हो जाता है। उनके आपसी प्रेम में खटास आ जाता है। बाद को यही कटुता दुश्मनी पैदा करती है। माता-पिताओं और बड़े भाई-बहनों को चाहिए कि वे लुका-छिपाकर कोई काम न करें। इससे महान् अनर्थ होता देखा गया है। लड़कों में इसी से चोरी करने की आदत पड़ती है। झूठ बोलना भी आ जाता है। स्वभाव से सदाचारी बालक-बालिकाओं का भी चरित्र नष्ट हो जाता है।

हमारे एक मित्र हैं। वे ५ वर्ष तक विलायत में रहकर लौटे थे। मैंने उनसे पूछा—"आपने विलायत में अपने धर्म की रक्षा कैसे की। इतने वर्ष वहाँ रहकर आप विशुद्ध भारतीय आचार-विचार कैसे अपनाए हुए हैं?"

उन्होंने जवाब दिया—''बालपन में ही पिताजी ने मुझे सिखाया था कि बेटा ऐसा कोई काम न करना, जिसको मुझसे कहते तुम्हें लज्जा मालूम पड़े। मैं जो कोई काम करने लगता था, तो मैं सोच लेता था कि उसमें कोई बुराई तो नहीं है, जो पिताजी को अच्छी न लगे। इसी प्रकार मैंने विलायत में अपनी मर्यादा की रक्षा की।''

इस जवाब से मैं मुग्ध हो गया। इसमें ही सारी शिक्षा का सार है। कोई ऐसा बुरा काम न करो, जिससे तुम्हें शरमाना पड़े। इस सम्बन्ध में महात्मा गाँधी के जीवन की एक घटना विशेष मनन करने योग्य है।

बचपन में गाँधीजी को बुरी संगत में सिगरेट पीने की आदत पड़ी। इसके लिये उन्हें चोरी करनी पड़ी। उस समय उनकी उम्र १५ साल की थी। जब थोड़े से पैसों से काम नहीं चला, तो उन्होंने अपने भाई के साथ कर्ज भी कर लिया। इस कर्ज को चुकाने के लिये उन्होंने एक सोने का कड़ा घर से चुरा लिया। चोरी तो कर ली, पर इस पाप को छिपाना गाँधीजी के लिये असह्य हो गया। आगे से चोरी न करने का उन्होंने दृढ़ निश्चय किया। उन्होंने तय किया कि वह अपना अपराध पिताजी के सामने स्वीकार कर लें। उन्होंने एक लम्बी चिट्ठी पिताजी को लिखी और उसमें अपना सारा दोष स्वीकार कर लिया। गाँधीजी ने लिखा है—

''चिट्ठी देखते ही पिताजी की आँखों से आँसू टपकने लगे। मैं भी बहुत रोया। चिट्ठी पिताजी ने फाड़ डाली और इस प्रकार मूक भाषा में मेरा अपराध क्षमा किया गया।''

इस प्रकार पछतावा करके गाँधीजी ने अपने पाप को धो डाला। अपराध स्वीकार करके क्षमा माँगने का यह अनोखा ढंग हर बच्चे के

लिये स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। इसी विचार से उन्होंने धर्म के प्रथम अंग यश का अर्जन किया। उनका जीवन सफल हुआ।

शिक्षा—सदाचार की महिमा अपरम्पार है। सदाचारी व्यक्ति जीवन में सदा सफल होता है।

सत्पुरुष

सत्पुरुष—वह मनुष्य है, जो कि दूसरों का उपकार करे और कभी जबान पर अपकार करने की बात न लावे।

गुणवान्—वह है, जो सदा विद्या की खोज और विचार में रहता है।

धैर्यवान्—वह है, जो सुख, दुःख, धन, क्षीणता और वृद्धि में सामान्य रहता है।

रूपवान्—वह मनुष्य है, जो विद्या और नम्रता, लज्जा, सत्यशीलता और धर्म के सद्गुणों से अलंकृत हो।

बुद्धिमान्—वह है, जो समय का रंग देखकर काम करता है।

विचारवान्—वह है, जो अपने अवगुणों और दूसरे के गुणों को याद रखता और कोई वचन बिना समझे मुख से नहीं निकालता।

ज्ञानी—वह है, जिसके मन में संसार के सुख-दुःख से विकार उत्पन्न नहीं होता, तथा सत्-असत् का ज्ञाता हो।

सन्तुष्ट—वह है, जो किसी आशा से बद्ध नहीं।

बलवान्—वह है, जो इन्द्रियों के प्रबल वेग को रोके।

सबका प्रिय—वह है, जो केवल अपना लाभ और स्वार्थ नहीं विचारता।

भाग्यवान्—वह है, जिसकी दशा देखकर ज्ञानियों को भय हो।

जीवन और मौत

१—ईश्वर की उपासना जीवन	—	प्रकृति की उपासना मौत
२—विद्या जीवन	—	अविद्या मौत
३—ब्रह्मचर्य्य जीवन	—	दुराचार मौत
४—सत्संग जीवन	—	कुसंग मौत
५—पुरुषार्थ जीवन	—	आलस्य मौत
६—परोपकार जीवन	—	स्वार्थ मौत
७—अहिंसा जीवन	—	हिंसा मौत
८—सच्चाई जीवन	—	झूठ मौत
९—सादगी जीवन	—	अय्याशी मौत
१०—पवित्र जीवन	—	अपवित्रता मौत
११—स्वाध्याय जीवन	—	अनध्याय मौत
१२—अस्तेय जीवन	—	चोरी मौत
१३—त्याग जीवन	—	लालसा मौत
१४—यज्ञ जीवन	—	भ्रष्टता मौत
१५—वीरता जीवन	—	कायरता मौत
१६—धैर्य जीवन	—	अधैर्य मौत
१७—दृढ़ता जीवन	—	शिथिलता मौत
१८—साहस जीवन	—	असाहस मौत
१९—उत्साह जीवन	—	निरुत्साह मौत
२०—प्रिय वाक्य जीवन	—	कटु वाक्य मौत
२१—कीर्ति जीवन	—	अकीर्ति मौत
२२—एकता जीवन	—	फूट मौत
२३—शान्ति जीवन	—	अशान्ति मौत
२४—न्याय जीवन	—	पक्षपात मौत
२५—कर्त्तव्य जीवन	—	अकर्त्तव्य मौत

संसार में प्रत्येक मनुष्य मौत से डरता हुआ देखा जाता है अतः मौत से डरो और जिन्दगी की इच्छा करो।

library.thearyasamaj.org

याद रखने योग्य १० बातें

१—ईश्वर के साथ नम्रता और उससे स्तुति प्रार्थना।
२—सर्व साधारण के साथ न्याय और शील।
३—इन्द्रियों के साथ दमन।
४—विरागियों के साथ सत्संग।
५—वृद्ध और बड़ों के साथ सेवा।
६—बराबरवालों से मित्रता, छोटों के साथ प्रेम।
७—वैरियों के साथ सहनशीलता।
८—मित्रों के साथ सत्कार, शान्ति, शीलता और स्नेह।
९—मूर्खों के साथ चुप्पी।
१०—बुद्धिमानों के साथ मान और प्रतिष्ठा।

पाँच के पाँच शत्रु

१—विद्या का शत्रु	—	घमण्ड
२—दान का शत्रु	—	कृपणता
३—बुद्धि का शत्रु	—	क्रोध
४—सन्तोष का शत्रु	—	लालच
५—सच का शत्रु	—	झूठ

elibrary.thearyasamaj.org